रजि. नं. पी.बी./जे.एल–/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

25 अगस्त व 1 सितम्बर 2013

मूल्य : 10 रु.

वर्ष: 70 अंक : 21-22

सृष्टि संवत् 1960853114

25 अगस्त व 1 सितम्बर 2013

दयानन्दाब्द 189

वार्षिक : 100 रू.

आजीवन : 1000 रू.

दूरभाष : 2292926, 5062726

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

जालन्धर

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

श्री कृष्ण जन्माष्टमी विशेषांक

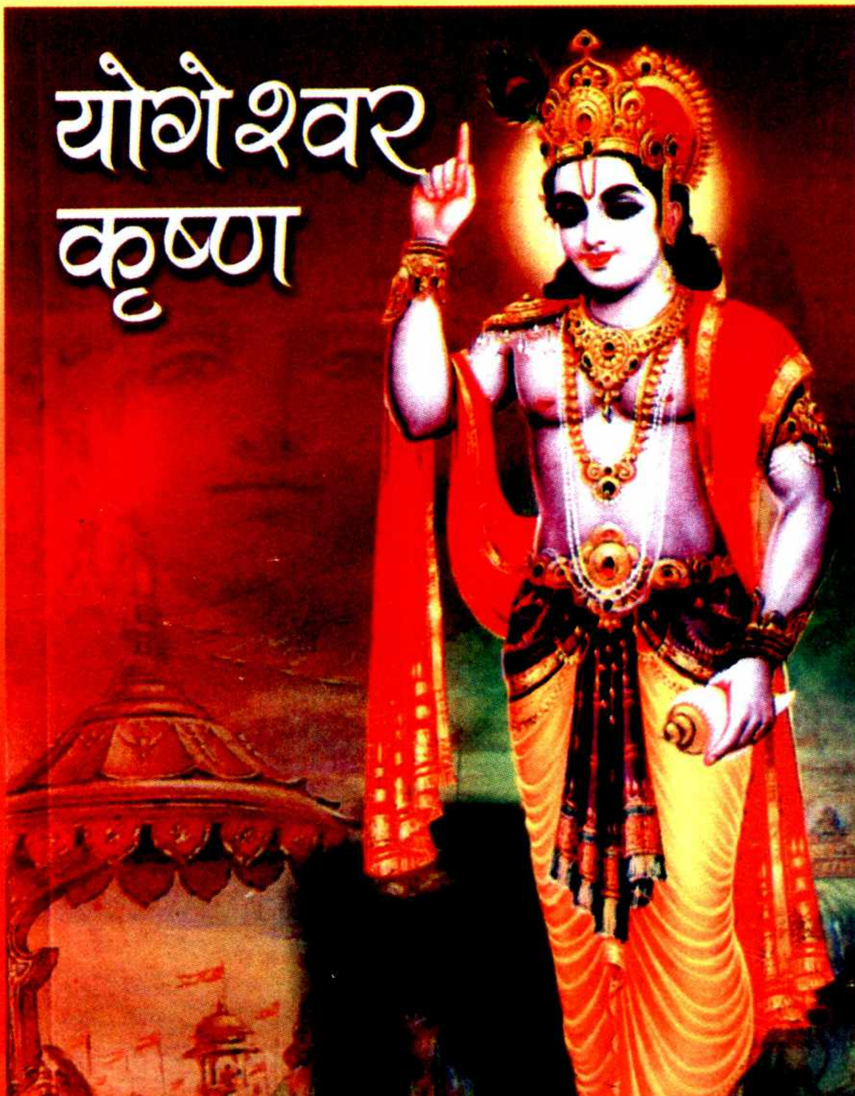

योगीराज श्रीकृष्ण अर्जुन को युद्ध में गीता का उपदेश देते हुए

www.thearyasamaj.org

आदर्श चरित्र योगेश्वर श्री कृष्ण

-ले० श्री सुदर्शन कुमार जी शर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

भारतीय इतिहास के क्षितिज में दो देदीप्यमान नक्षत्र हैं। एक है मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम तथा दूसरे हैं योगेश्वर श्री कृष्ण। दोनों महापुरुष भारतीय संस्कृति के प्रतीक तथा विश्व भर में अतुलनीय एवं स्पृहणीय चरित्र वाले हैं। इस युग के महान वेद मनीषी महर्षि दयानन्द श्री कृष्ण के चरित्र से इतने प्रभावित हैं कि अपने ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में वे उन्हें आप्त पुरुष की संज्ञा देते हैं। महर्षि का लेख है- श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्तपुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरणपर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा।

योगीराज भगवान श्री कृष्ण जी का आदर्शमय जीवन सब के लिए अनुकरणीय है। महर्षि दयानन्द जी उनके बारे में लिखते हैं कि श्री कृष्ण जी ने जीवन पर्यन्त कोई ऐसा काम नहीं किया, जो निन्दनीय हो। वह धर्मात्मा और आप्त पुरुष थे। इन प्रशंसा वचनों से यह भी स्पष्ट है कि देव दयानन्द को महाभारत में वर्णित कृष्ण का चरित्र ही अभीष्ट है, भागवत में चित्रित कृष्ण महर्षि को अभिप्रेत नहीं। इस सम्बन्ध में उनका कथन स्पष्ट है- इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाए हैं- जिनको पढ़कर, सुन सुनाकर अन्य मतवाले श्री कृष्ण की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण के सदृश महात्माओं की निन्दा क्यों कर होती।

महाभारत में स्पष्ट लिखा है कि प्रातः काल उठकर श्री कृष्ण जी ने संध्या हवन यज्ञ आदि सब क्रियाओं को पूर्ण किया और फिर ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर नगर की ओर प्रस्थान किया और द्वारिका से हस्तिनापुर जाते समय जब सायंकाल का समय हुआ तो उन्होंने सांयकाल के समय भी संध्या यज्ञ और परमात्मा की उपासना की। इससे स्पष्ट है कि वह दोनों समय यज्ञ करने वाले और परमात्मा की उपासना करने वाले थे। परन्तु ज्ञान शून्य लोगों के अन्दर एक गलत धारणा ने जन्म दिया है कि भगवान श्री कृष्ण ईश्वर का अवतार थे। ऐसे लोग गीता के श्लोक का हवाला देते हुए इस बात की पुष्टि करते हैं-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम।।

श्री कृष्ण जी के बारे में कहते हैं कि जब धर्म को लोप होता तब-तब मैं शरीर धारण करता हूं। महर्षि दयानन्द सरस्वती इस पर अपनी टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि यह बात वेद विरुद्ध होने से प्रमाणित नहीं। ऐसा तो हो सकता है कि श्री कृष्ण धर्मात्मा और धर्म की रक्षा करना चाहते थे मैं युग-युग में जन्म ले करके श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों का नाश करूं, तो इसमें कोई दोष नहीं क्योंकि परोपकार के लिए सत्पुरुषों का तन, मन और धन होता है। जिस किसी महापुरुष में विशेष गुण आ जाएं, साधारण लोग या तो उसको ईश्वर मान बैठते हैं या मूर्ति बनाकर उसकी पूजा आरम्भ कर देते हैं। उनके गुणों को जिसके कारण वह संसार में चमका है आचरण में नहीं लाते। यह मिथ्या विश्वास ऐसे मनुष्य को दुखों में डुबोता है। वास्तविकता तो यह है कि हमें उनके गुणों को अपने जीवन में धारण करना चाहिए और कठिन साधना करनी चाहिए कि हम भी ऐसे ही बनें। क्योंकि साधना रहित पुरुष के श्रेष्ठ भाव नहीं होने से आस्तिक भाव उत्पन्न नहीं होते।

इस वर्ष 28 अगस्त को श्री कृष्ण का जन्मदिन मनाया जाएगा। प्रायः देखा गया है कि जब किसी महापुरुष का जन्मदिन मनाया जाता है तो उनके भक्त अन्धविश्वास से प्रेरित होकर उनका गुणगान करने लगते हैं परन्तु यह समझने का प्रयास नहीं करते कि वह क्या थे? और उन्होंने हमें क्या उपदेश दिया है। आज लोग आर्य समाज के ऊपर यह दोष लगाते हैं कि आर्य समाजी भगवान राम और श्रीकृष्ण को नहीं मानते, परन्तु वे लोग सत्यार्थ प्रकाश में श्री कृष्ण के प्रति महर्षि दयानन्द के विचारों को पढ़े तो पता चलेगा कि हम उनके जिस स्वरूप को मानते हैं उसकी वे कल्पना भी नहीं कर सकते।

(शेष पृष्ठ 8 पर)

www.thearyasamaj.org

योगीराज श्री कृष्ण जी का जन्म दिवस

-ले० श्री प्रेम भारद्वाज महामंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

हमारे भारत देश की यह महानता है कि यहां अनेकों चक्रवर्ती राजा, महाराजा, धर्मात्मा तथा बड़े बड़े राजनीतिज्ञ राजा, बड़े बड़े न्यायकारी विद्वान, ऋषि महर्षि और देव तथा दिव्य पुरुष हुये हैं। यह देश ऋषियों, मुनियों का देश है। देशहित चिन्तकों का देश है। इस देश ने सारे संसार को मानवता का संदेश दिया है, शांति का संदेश दिया है।

हमारे देश की संस्कृति बहुत महान है। हमारे देश के महापुरुषों ने अपनी संस्कृति को सारे संसार में फैलाया है। एक समय था जब देश विदेश के लोग यहां शिक्षा ग्रहण करने के लिये आया करते थे। भारत सारे संसार का शिक्षा का केन्द्र था। नालंदा जैसा यहां बहुत बड़ा विश्वविद्यालय था। इस देश में कहीं न कोई चोर था, न जार था, न अत्याचारी, न कोई दुराचारी था। यहां के सभी लोग धार्मिक थे, दिव्य पुरुष थे। तभी तो महाराजा अश्वपति जी ने घोषणा की थी कि मेरे देश में कोई चोर-जार नहीं है। जो प्रतिदिन यज्ञ न करता हो ऐसा कोई गृहस्थी नहीं है अर्थात सभी लोग यज्ञ करने वाले हैं। सभी लोग धर्मात्मा हैं।

आज से साढ़े पांच हजार वर्ष पूर्व हमारा देश छोटे छोटे राज्यों में विभाजित हो गया था। पांच गांव का मालिक भी राजा कहलाता था। जिसमें थोड़ी सी शक्ति और बुद्धि होती थी वह दूसरों को अपने अधीन कर उनका शासक बन कर बैठ जाता था। आपस में इन छोटे छोटे राज्यों में भी फूट पड़ी हुई थी। वह आपस में लड़ते भिड़ते रहते थे। एक शक्तिशाली राजा जरासंध ने छोटे छोटे लगभग 70 राजा अपनी जेल में रखे हुये थे और वह उनको सौ करके कत्ल करना चाहता था। उस समय का दूसरा शक्तिशाली राजा कंस था जो राज्य के लिये इतना लोलुप था कि उसने अपने पिता उग्रसेन को जेल में डाल कर स्वयं राजगद्दी संभाल ली थी। उसी राजा कंस ने किन्हीं तथाकथित भविष्यवाणियों के आधार पर अपनी मृत्यु के डर से अपनी बहन देवकी को भी जेल में डाल दिया था कि कहीं बहन के गर्भ से पैदा होने वाली सन्तान उसका वध न कर दें। उसी काल में हस्तिनापुर पर महाराज धृतराष्ट्र का राज्य था। कौरव और पाण्डव दोनों इस राज्य के अधिकारी थे परन्तु पाण्डु की मृत्यु के बाद प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र को राजा बना दिया गया क्योंकि पाण्डु के सुपुत्र बहुत छोटे छोटे थे। कौरव पुत्रों में दुर्योधन और पाण्डवों में युधिष्ठिर सबसे बड़े थे परन्तु पाण्डवों और कौरवों में दोनों में ईर्ष्या और द्वेष बढ़ा हुआ था।

इस प्रकार आज से साढ़े पांच हजार वर्ष पहले भी हमारे देश में फूट का राज्य था। लोगों में गिरावट आ गई थी। लोग धर्म से विमुख हो गये थे। उनमें ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, लड़ाई-झगड़े, स्वार्थ, भ्रष्टाचार, अनाचार बढ़ना आरम्भ हो गया था। इसलिये कई विदेशी लोग भारत की फूट का लाभ उठा कर यहां अपना आधिपत्य जमाना चाहते थे। इस सारे वातावरण में किसी एक ऐसी महान शक्ति की आवश्यकता थी जो इस सारे संकट से देश को बचा सके। इसलिये आज से साढ़े पांच हजार वर्ष पूर्व कंस की जेल की चारदीवारी में भाद्रपद की अष्टमी को एक बालक का जन्म हुआ। यह देवकी की आठवी संतान थी। इससे पहले कंस देवकी की सात संतानों को समाप्त कर चुका था। आठवीं सन्तान के होने की कंस को खबर थी। देवकी पर पहरा सख्त था परन्तु यह सब कुछ होते हुये भी यह आठवीं सन्तान कंस की जेल से बाहर निकली और उसके स्थान पर यमुना पार से गोकुल से महाराज नंद के घर से एक बच्चा लाया गया जो लड़की थी और उसे जेल में उसी तरह से पहुंचाया गया जैसे बालक श्री कृष्ण को बाहर निकाला गया था परन्तु कंस के किसी गुप्तचर को किसी पहरेदार को, किसी विश्वसनीय व्यक्ति को कुछ पता नहीं चला। कंस तक केवल यही संदेश पहुंचा कि देवकी के लड़की पैदा हुई है। कंस यह जानकर जेल में आया और देवकी से उस कन्या को छीन कर मौत के घाट उतार दिया। कंस ने समझा कि मैंने अपना काल समाप्त कर दिया अब मुझे कोई मारने वाला नहीं हैं।

कंस इसके बाद निश्चिन्त हो गया परन्तु देवकी का आठवां बालक जिसका नाम श्री कृष्ण रखा गया वह गोकुल में बढ़ता, फलता फूलता रहा। (शेष पृष्ठ 8 पर)

www.thearyasamaj.org

श्रीकृष्ण जी

-लेखक श्री अशोक पुरुथी एडवोकेट रजिस्ट्रार आर्य विद्या परिषद पंजाब- जालन्धर

कालान्तर में अनेकों युग पुरुष आये। इन युग पुरुषों में श्री कृष्ण जी का भी अपना एक विशेष स्थान है। यदि किसी ने श्री कृष्ण जी महाराज के सम्बन्ध में आर्य समाज का दृष्टिकोण जानना हो तो वह पहले सत्यार्थ प्रकाश में लिखे महर्षि दयानन्द के उनके सम्बन्ध में निम्नलिखित शब्दों पर विचार करे। महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं कि देखो श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अति उत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा। और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये हैं। जो यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निंदा क्यों कर होती? कृष्ण जन्माष्टमी पर प्राय: भगवान कृष्ण के जीवन की कई घटनाएं हमारे सामने आती हैं। उनके द्वारा दिये गये गीता के उपदेश पर भी लोग बहुत कुछ कहते हैं परन्तु देखना यह है कि जिस रूप में कई व्यक्ति व कई संस्थाएं भगवान कृष्ण को जनता के सामने प्रस्तुत करती है वह आपत्तिजनक भी होता है और निन्दनीय भी। इस प्रसंग में महर्षि दयानन्द जी महाराज ने कृष्ण के लिये दो शब्दों का प्रयोग किया है आप्त पुरुष और महात्मा। और मैं समझता हूं कि इन दो शब्दों में उन का यथार्थ रूप हमारे सामने आ गया है। इसके अतिरिक्त कृष्ण जी महाराज के जितने भी रूप कृष्ण भक्त लोगों ने अब तक प्रस्तुत किये हैं मेरी अपनी सम्मति के अनुसार उनका आधार कृष्ण काव्य है और इस बात को कौन स्वीकार नहीं करता है कि काव्य में अलंकार के साथ कल्पना का पुट भी होता है और जब कोई धर्म काव्य को आधारशिला बना कर अपने मन्तव्यों का महल बनाकर खड़ा कर लेता है तो उसका वास्तविकता से दूर- दूर कोई रिश्ता नहीं होता। इसलिये मानना चाहिये कि कृष्णभक्तों और आर्य समाज के दृष्टिकोण में श्री कृष्ण जी के सम्बन्ध में जो अंतर है उसका कारण काव्य कल्पना ही है।

भगवान श्री कृष्ण के विषय में तो उसके अपने ही देश में अपने आप को उनके भक्त कहने वाले उनके विषय में जो कुछ लिखते रहते हैं उसे कई बार पढ़ कर शर्मिन्दा होना पड़ता है। ऐसी स्थिति में आर्य समाज का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह भगवान कृष्ण को अपने पूजनीय और वन्दनीय महापुरुष के रूप में अपनाएं और जहां भी उनके विषय में कोई व्यक्ति अनर्गल बातें कहें जैसी कि भागवत में लिखी गई हैं या जो कुछ दूसरे व्यक्ति भी कहते हैं, उनके विरुद्ध आर्य समाज को अपनी आवाज उठानी चाहिये। भगवान राम और भगवान कृष्ण हमारे दो ऐसे महापुरुष हैं जिन पर हम जितना भी गर्व करें, कम हैं क्योंकि उन्हें अपने असली रूप में जनता के सामने पेश नहीं किया गया इसलिये आर्य समाज का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के आदेशानुसार भगवान कृष्ण जी के विषय में आम जनता को बताएं कि वह क्या थे और अपनी गीता के द्वारा उन्होंने संसार में क्या उपदेश दिया था? आर्य समाज के उत्सवों और सत्संगों में जहां वेद मंत्रों की व्याख्या की जाती है वहां गीता के श्लोक भी आम जनता के सामने रखे जा सकते हैं जिनके द्वारा भगवान कृष्ण के कर्मयोग का सिद्धान्त हम अपने देशवासियों के सामने रखें।

तात्पर्य यह है कि हमारे देश में जितने भी महापुरुष हुये हैं आर्य समाज को उन्हें अपनाना चाहिये। इसके साथ ही हमें यह भी देखना चाहिये कि श्री कृष्ण और श्री राम में ऐसे कौन से गुण थे जो इतना समय व्यतीत होने के बाद भी आम जनता के मनोमस्तिष्क में विद्यमान हैं। मेरा कहने का तात्पर्य यह है कि आर्य समाज को अपना कार्य क्षेत्र बढ़ाते हुये इन दोनों महापुरुषों के जीवन पर भी प्रकाश डालना चाहिए। विशेष रूप से इसलिये भी कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में जो कुछ लिखा है उसके आधार पर भी हम जनता को बता सकते हैं कि हमारे यह महापुरुष क्या थे और कृष्ण जन्माष्टमी और राम नवमी यह दो त्यौहार प्रत्येक आर्य समाज में मनाए जाने चाहिये और उस समय इन दोनों महापुरुषों के जीवन की विशेष घटनाएं जिनसे हमें प्रेरणा मिल सकती है, जनता के सामने रखनी चाहिये।

www.thearyasamaj.org

महान राजनीतिज्ञ श्री कृष्ण

लेखकः श्री सुधीर शर्मा कोषाध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

श्री कृष्ण जी ज्ञान विज्ञान तथा अन्य सभी विद्याओं में इतने निपुण थे कि सम्पूर्ण पृथ्वी पर इन जैसा कोई अन्य व्यक्ति नहीं था। भगवान श्री कृष्ण ने बचपन से लेकर जवानी तक लोक कल्याण के लिये तथा देश कल्याण के लिये राजनीति का सहारा लिया। उनका प्रादुर्भाव भारत में उस समय हुआ जब यह देश छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। जिस मथुरा की भूमि पर उनका जन्म हुआ वहां उस समय अत्याचारी राजा कंस का राज्य था। सबसे पहले उन्होंने बिना सेना के और बिना हथियारों के बड़ी बुद्धिमत्ता से उसकी राजधानी में जाकर भरी सभा में उसका वध कर दिया। उसके सिपाही भी वहां विद्यमान थे लेकिन किसी ने भी अत्याचारी कंस का साथ नहीं दिया। वह पाण्डवों के बहुत बड़े हितैषी थे। उन्होंने समय समय पर उनकी बहुत सहायता की। जब पाण्डव दिग्विजय होने के लिये निकले तो उन्होंने उन्हें सबसे पहले एक अत्याचारी राजा जरासंध को समाप्त करने के लिये कहा। वह अपने साथ कोई सेना न लेकर केवल अर्जुन और भीम को साथ लेकर उसकी राजधानी में चले गये और उसे वहां जाकर ललकारा। अचानक इन लोगों को वहां आए देखकर जरासंध हड़बड़ा गया। जब उसे द्वंद्व युद्ध के लिये ललकारा गया तो उसने भीम के साथ लड़ने की बात स्वीकार की। भीम और जरासंध का घमासान युद्ध हुआ। जरासंध बहुत अधिक बलवान था और उसने भीम को युद्ध में थका दिया तब भगवान कृष्ण ने भीम को इशारा किया कि यह ऐसे नहीं मरेगा। उन्होंने एक तिनका लेकर उसे बीच में से फाड कर भीम को समझाया और भीम ने जरासंध को टांगों से पकड़ कर बीच में से फाड़ दिया और जरासंध का अंत कर दिया। जब पाण्डवों का राजसूय यज्ञ आरम्भ हुआ तो श्री कृष्ण को उसका अध्यक्ष बनाया गया इस पर एक और अत्याचारी राजा शिशुपाल ने इस पर बहुत एतराज जताया। श्री कृष्ण चुपचाप सुनते रहे। उसने श्री कृष्ण को गालियां देनी आरम्भ कर दी परन्तु श्रीकृष्ण शांत भाव से सब कुछ सुनते रहे। जब उसने 100 गालियां दे ली तो श्री कृष्ण ने देखा कि अब सारी जनता जो यज्ञ में आई हुई है उसकी हमदर्दी उनके साथ हो गई है तो उन्होंने सुदर्शन चक्र से शिशुपाल का सिर उड़ा दिया। वहां जो शिशुपाल के हितैषी बैठे थे वह भी उस समय कुछ नहीं कर सके। कौरवों और पांडवों ने युद्ध ठन गया। दुर्योधन और अर्जुन दोनों सहायता के लिये एक ही समय में श्री कृष्ण के पास चले जाते हैं। श्री कृष्ण के लिये समस्या थी कि वह किस का साथ दें क्योंकि वह दुर्योधन को भी नाराज नहीं करना चाहते थे। उन्होंने दुर्योधन से कहा कि देखो भाई इस युद्ध में मैं हथियार नहीं उठाना चाहता। एक तरफ निहत्था मैं हूंगा और दूसरी तरफ मेरी सेना होगी। जो मांगना चाहो मांग लो। दुर्योधन ने कहा कि जब आपने हथियार नहीं उठाना है तो मैं आपको लेकर क्या करुंगा आप मुझे तो अपनी सेना ही दे दो। कितनी बड़ी बुद्धिमता से वह पांडवों के साथी बन गये। अर्जुन उन्हें पाकर बहुत खुश हुआ। क्योंकि यह पाण्डवों की जीत की ही निशानी थी।

युद्ध आरम्भ हुआ तो अर्जुन ने हथियार छोड़ दिये और श्री कृष्ण ने उसे गीता का उपदेश देकर पुनः युद्ध के लिये खड़ा कर दिया। भीष्म पितामह कई दिन तक लड़ते रहे पाण्डव सेना में हाहाकार मच गया। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा कि अब क्या करें। श्री कृष्ण ने कहा कि चलो दादा से पूछ आएं कि तुम कैसे मरोगे। सभी को आश्चर्य हुआ कि दादा जी कैसे यह बता देंगे कि मैं कैसे मरूंगा। श्री कृष्ण पांचों पांडवों को लेकर दादा के शिविर में गये और सभी को चरणस्पर्श के लिये कहा। दादा ने आशीर्वाद दिया विजयी भवः। श्री कृष्ण ने तुरन्त कहा कि महाराज यदि आप इसी प्रकार एक दो दिन और लड़ते रहे तो आपका आशीर्वाद झूठा सिद्ध होगा। दादा ने कहा कि मैं क्षत्रिय हूं युद्ध में लड़ना मेरा धर्म है परन्तु मैं नपुंसक पर हथियार नहीं उठाता। श्री कृष्ण पांडवों को लेकर वापिस आ गये और कहा कि प्रातः शिखण्डी को पांडवों की सेना का सेनापति बना दिया जाये। यही हुआ। भीष्म ने शिखण्डी को देखकर हथियार छोड़ दिये और अर्जुन ने उसे समाप्त कर दिया।

(शेष पृष्ठ 8 पर)

www.thearyasamaj.org

संसार के महान योगी भगवान श्रीकृष्ण

-ले० श्री रणजीत आर्य सभा मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

भारतवर्ष में ही नहीं सारे विश्व में योगीराज श्री कृष्ण के बहुत सारे अनुयायी भक्त हैं। जिन्होंने लाखों की संख्या में मन्दिर बना डाले। इतना ही नहीं श्री कृष्ण को साक्षात ईश्वर मान कर उपासना में जुट गए। परन्तु फिर भी श्री कृष्ण के सच्चे स्वरूप को नहीं पहचान सके। श्री कृष्ण एक प्रभावशली नरवीर, रणवीर, कर्मबली, राजनीति में निपुण, ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, यम-नियम के दृढ़ व्रतधारी तथा सोलह कला युक्त महापुरूष थे।

श्री कृष्ण ने कारावास में जन्म, बाल्यकाल में गोकुल नन्द के घर गवालों में रमण करने वाले दूध, दही, माखन खाने वाले मल्लयुद्ध कसरत करने वाले अपनी शक्ति से बड़े-बड़े दुष्टों को धराशायी करने वाले वीर पुरुष थे। बड़े होने पर अपने अत्याचारी मामा कंस को मारकर माता को कारागार से छुड़ाया और अपना कर्त्तव्य पालन कर माता-पिता का ऋण अदा किया।

वेदवेत्ता आचार्य सन्दीपन गुरु के आश्रम में विधिपूर्वक विद्या प्राप्त की। थोड़े ही समय में ज्ञानवान एवं राज्य नीति निपुण होकर अपना राज्य भार संभालते हुए, अनेक विघ्नों तथा बाधाओं को झेलते हुए आगे बढ़ते रहे। पांडवों के साथ न्याय नीति से सहयोग दिया। दुर्योधन को समझाने के लिए दिन-रात एक कर दिया। सारे विश्व में दृष्टि डालते हुए विचारधारा में उतर पड़े कि महाभारत न होवे किन्तु जो होना है वह होकर ही रहता है। योगीराज श्री कृष्ण नहीं चाहते थे कि महाभारत का युद्ध हो मगर पापों का घड़ा फूटे बिना नहीं रहता। वैसा ही हुआ। अन्त में सारी संस्कृति के वेदवेत्ता महापुरुषों का नाश देखना पड़ा। युद्ध भूमि में अर्जुन के हताश होने पर भी आत्मा की अमरता का उपदेश दिया। रणभूमि में वास्तविक उपनिषद का तत्व दिखाया। कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग आदि तत्वसार अर्थात् आर्ष ग्रन्थों का निचोड़ दिखाया। जो आज वर्तमान समय में भी गीता उपदेश के रूप में मौजूद है। ऐसे महापुरुष योगीराज श्री कृष्ण कहलाए। हमारे भारतवर्ष का गौरव एवं शक्तिशाली देश की गरिमा ज्ञान के सत्पथ पर चलने वाले श्री कृष्ण का आज नित नया गान करते हुए भक्त जन थकने ही नहीं पाते।

योगीराज श्री कृष्ण का जन्मदिवस महान घोर रात्रि भाद्रपद कृष्ण अष्टमी को हुआ था। जिसे हम सभी बड़े उत्साह से मनाते चले आ रहे हैं। महाभारत के पश्चात् इतना अन्धकार फैला कि जिसकी सीमा न रह पाई। अन्धश्रद्धा में लोग राधेश्याम-राधेश्याम ही करने लगे, विचार भी नहीं किया कि राधा कौन थी। गोकुल में रहने से कृष्ण का सम्बन्ध केवल नन्द परिवार से था। राधा से कहीं ऐसा सम्बन्ध ही नहीं था। परन्तु अपनी अज्ञानता और मूर्खता के कारण लोगों ने श्री कृष्ण के शुद्ध और पवित्र जीवन को भुलाकर उन्हें कामी, रासलीला करने वाला, माखन चोर, स्नान करती हुई स्त्रियों के वस्त्र चुराने का मिथ्या आरोप लगा दिया। लोग कार्टून बनाकर अपने साथ कृष्ण भगवान को भी नचाने लगे।

योगीराज श्री कृष्ण का सारा जीवन समन्वय की अटूट श्रृखंला है। उनके सम्पूर्ण जीवन में ज्ञान, कर्म और भक्ति का सामंजस्य है। समत्वं योग उच्यते, सन्तुलन को उन्होंने योग की संज्ञा दी है। श्री कृष्ण ने हमें उन दुरितों से बचने को कहा है जो परनिंदा, परदोष दर्शन, द्वेष तथा विभेदात्मक प्रवृत्तियों से उत्पन्न होते हैं। उन्होंने गीता में आत्मा के अमरत्व का शाश्वत उदघोष कर जीवन को दैवी संपदा से युक्त किया। जय-पराजय, हानि-लाभ, सुख-दुख, आदि द्वन्दों से अनासक्त रहकर स्वस्ति पथ का पथिक बनने की प्रेरणा उनके जीवन से प्राप्त होती है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है कि-

कृष्ण बली सद्भाविक था, वेद विरूद्ध चलाए न चले।
वीर बड़े रणधीर बड़े, सद्नीति से सही काम कर दिखाए।
योगी महावर था मति सागर, कृष्ण कला धरदैव कहलाए।
सो धन सागर सो गौरवत्ता, रख आदर्श जीवन दर्शाए।

श्री कृष्ण की सच्ची भक्ति यही है कि हम उनके जीवन चरित्र को याद कर स्वयं अपना जीवन उसी सांचे में ढालें। हमारा परम कर्त्तव्य बन जाता है कि हम महापुरुषों की वैदिक पद्धति जो सदा से चली आई है उसे कभी न भुलाएं। हम उनके सच्चे स्वरूप को, उनके उज्जवल चरित्र को स्मरण करते हुए उनका जन्मदिन मनाएं। तभी हमारा जन्माष्टमी के पर्व को मनाना सार्थक होगा।

www.thearyasamaj.org

आप्त पुरुष - योगीराज श्री कृष्ण

-लेखक श्री सुरेश कुमार शास्त्री सभा कार्यालय जालन्धर

द्वापर युग के अन्त में भारत के भाग्यावकाश पर अविद्या एवं अन्धकार की घनघोर घटाएं छायी हुई थीं, ऐसे समय में असुरों के उत्पीड़न से भयभीत प्रजा की रक्षा के लिए दानवता के पंजे में फंस कर कराहती हुई मानवता के उद्धार के लिए भाद्र कृष्णाष्टमी की निशा में रात्रि के अंधकार को चीरते हुए अपने आलोक से दिशाओं को आलोकित करते हुए श्री कृष्ण जी ने भारतीय धरातल पर जन्म लिया। यह भारत देश का सौभाग्य है कि यहां श्रीकृष्ण जैसे धर्मात्मा, पुण्यात्मा, योगी, तपस्वी, वेदज्ञ, नीतिज्ञ तथा लोक हितकारी महापुरुषों ने जन्म लिया। उनका व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व बहुआयामी था। इसी कारण हजारों वर्षों के घात-प्रतिघात और विवादों को झेलते हुए वे आज भी पूजित, अलौकिक व महापुरूष के पद पर प्रतिष्ठित हैं। उनके मकालीन तथा बाद में अनेक महापुरुष हुए किन्तु जितनी धूमधाम, उत्साह एवं व्यापक स्तर पर श्री कृष्ण का जन्मोत्सव मनायी जाता है उतना अन्य किसी का नहीं। क्योंकि उनके जीवन का उद्देश्य था **परित्राणाय साधूनां** सज्जनों की रक्षा करना तथा **विनाशाय दुष्कृताम** - दुष्टों का दलन करना और **धर्म संस्थापनार्थाय** धर्म की स्थापना करना। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उन्होंने सारा जीवन लगा दिया। वे खण्ड-खण्ड भारत को अखण्ड देखना चाहते थे। उनका सारा जीवन संघर्ष तथा बहुजनहिताय में बीता। जन्म जेल में हुआ। जन्म से पहले ही मृत्यु के वारण्ट निकल गए। पराये घर में पले। मामा को मारना पड़ा। राज्य छोड़ना पड़ा। जातीय पतन की चिन्तागिन में जीवन की समाप्ति हुई। आरम्भ से ही चारों ओर विषम परिस्थितियों का घेरा रहा, ऐसी कठिन अवस्था में उन्होंने अपने आपको बड़े धैर्य, कुशलता, निपुणता से स्थापित किया। यह उनके व्यक्तित्व की प्रेरक, प्रेरणा हताश, निराश व साधनहीन मनुष्य समाज को ऊपर उठाने का साहस देती रहेगी। ऐसा इतिहास पुरूष, युग पुरुष संसार में अन्यत्र नहीं हुआ है?

हमारा दुर्भाग्य रहा है कि महापुरुषों के जीवन को विकृत एवं कलंकित करने वाली संसार में कोई जाति है तो वह हिन्दू जाति है। भारत के महापुरुषों की परम्परा में सबसे अधिक विकृत भागी व कलंकित श्री कृष्ण का चरित्र किया गया है। यही रूप आम जनता में जाना माना और पूजा जाता है। उस देवात्मा का वास्तविक जीवन चरित्र गीता व महाभारत में मिलता है। जहां उन्हें सर्वगुण सम्पन्न, योगी, उपदेष्टा, मार्गदर्शक आदि नाम दिए गए हैं, वहां भागवत और पुराणों में उन्हें माखन चोर, लम्पट, भोगेश्वर और कामी सिद्ध कर दिया है। रही सही कसर टेलीविजन सीरियल और रासलीलाएं, कृष्णलीलाएं पूरी कर रही हैं। इनके द्वारा भंयकर रूप से अश्लीलता, पाखण्ड और अंधविश्वासों का प्रचार-प्रसार किया जा रहा है। यह अटल सत्य है कि योगीराज श्रीकृष्ण का जीवन चरित्र, विचार, कर्म, स्वभाव व आचरण ऐसा नहीं था, जैसा कि आज संसार में दिखाई देता है।

आर्य समाज सदा ही सत्य का शोधक और उसका प्रचारक व प्रसारक रहा है। महर्षि दयानन्द की महान् देन रही है कि उन्होंने वैदिक धर्म को, भारतीय सभ्यता को तथा महापुरुषों के स्वच्छ उज्जवल व पवित्र जीवन चरित्र को संसार के सामने रखा। उन्होंने योगीराज श्रीकृष्ण के सत्यरूप का और महत्त्व का जो प्रमाण पत्र सत्यार्थ प्रकाश में दिया है वह हम सबके लिए अनुकरणीय तथा वन्दनीय है- श्रीकृष्ण का गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र महापुरुषों के सदृश है। श्रीकृष्ण ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा- वे पवित्रात्मा थे, आत्मदर्शी थे, आस्तिक और योगी थे। आर्य समाज उन्हें महामानव के रूप में मानता है। उनका महामानवीय व्यवहार और आप्तजनीय आचरण उनकी लोकप्रियता का आधार बना है। जिस रूप में दुनिया श्रीकृष्ण को मानती है उस रूप में आर्य समाज नहीं मानता। वह तो उन्हें सदाचारी, संयमी, सद्गृहस्थ, और धर्मोपदेष्टा मानता है। अन्य लोग उन्हें लम्पट, कामी, माखनचोर, नटखट आदि के रूप में मानते हैं। आर्य समाज उन्हें आप्त पुरूष तथा योगीराज महापुरुष के रूप में पूज्य भाव प्रकट करता है जबकि पौराणिक उन्हें ईश्वरावतार मानते हैं।

www.thearyasamaj.org

महर्षि ने श्रीकृष्ण के विषय में सत्यार्थ प्रकाश में जो कुछ लिखा है इससे किसी को मतभेद नहीं हो सकता वास्तविक स्थिति यह है कि श्री कृष्ण को बदनाम करने वाले उनके भक्त ही हैं। उनके विषय में कई बार ऐसे चित्र भी बनवाए जाते हैं जिनमें वह किसी तालाब या नदी में स्नान करने वाली स्त्रियों के वस्त्र चुरा रहे होते हैं, कहीं गोपियों के साथ नाच रहे होते हैं। इस प्रकार की और भी कई निराधार कथाएं उनके विषय में फैलाई जाती हैं किसी महापुरुष का इससे बड़ा अपमान कोई और नहीं हो सकता। जब हम दूसरे मतावलम्बियों को देखते हैं हमें तब पता चलता है कि वह अपने महापुरुषों के मान और आदर की कितनी रक्षा करते हैं। अगर उनके महापुरुषों के खिलाफ कोई कुछ लिख दें तो वे सिर काटने को तैयार हो जाते हैं। परन्तु भगवान श्री कृष्ण के विषय में तो उनके अपने ही भक्त कहलाने वाले इस प्रकार की अनर्गल बातें लिख देते हैं कि उसे पढ़ कर कई बार सिर लज्जा से झुक जाता है। सम्भवत: यही कारण था कि महर्षि दयानन्द सरस्वती को सत्यार्थ प्रकाश में इसके विरुद्ध लिखना पड़ा।

वैदिक चिन्तन क्रियात्मक व्यवहारिक पक्ष पर बल देता है। बिना आचरण के धर्म का कोई मूल्य नहीं है। श्री कृष्ण ने अपने क्रियात्मक जीवन के माध्यम से जीवन के विविध पक्षों को प्रस्तुत किया। गीता निष्काम कर्म के द्वारा मोक्ष तक पहुंचने की प्रेरणा देती है। जब कर्म में धर्म का समावेश हो जाता है तो वह प्रेय और श्रेय मार्ग दोनों को सुखी बना देता है। कर्म की कुशलता, सुन्दरता और पूर्णता का पाठ यदि हम सीखना चाहें तो श्री कृष्ण जी से अच्छा और किसी से नहीं सीख सकते। उन्होंने जो कार्य किया वह सुन्दरता व कुशलता से किया। उनके जीवन व्यवहार, आचरण, स्वभाव की अनेक घटनाओं से इतिहास भरा पड़ा है। ऐसी स्थितियों में आर्य समाज का कर्त्तव्य हो जाता है कि वह भगवान श्री कृष्ण को अपने पूजनीय और वन्दनीय रूप में अपनाएं और जहां भी उनके विषय में कोई अनर्गल बातें कहे, उनके विरुद्ध आर्य समाज को अपनी आवाज अवश्य उठानी चाहिए। भगवान राम और भगवान श्री कृष्ण हमारे दो ऐसे महापुरुष हैं जिन पर हम जितना गर्व करें उतना कम है क्योंकि उन्हें अपने असली रूप में जनता के सामने पेश नहीं किया गया। ऐसे में आर्य समाज का कर्त्तव्य हो जाता है कि वह महर्षि दयानन्द के निर्देशानुसार भगवान श्री कृष्ण को अपनाकर उसके विषय में जनता को बताएं कि वह क्या थे और उन्होंने गीता के द्वारा संसार को क्या उपदेश दिया था। अगर हम श्री कृष्ण के द्वारा बताएं गए कर्मयोग के सिद्धांत को अपने जीवन में धारण कर लें तो हम अपने जीवन को श्रेष्ठ बना सकते हैं

आज आवश्यकता है श्रीकृष्ण के वास्तविक स्वरूप को ठीक से समझने की और उसे प्रचारित करने की। जो भ्रांतियां व विकृतियां श्री कृष्ण के साथ जुड़ गई हैं, उन्हें हटा-मिटाकर ही व्यास जी का यह कथन सार्थक होगा- कृष्णां वन्दे जगत् गुरूम्। तभी उनके जन्मोत्सव के मनाने की सच्ची सार्थकता, उपयोगिता, व्यवहारिकता सिद्ध होगी और यह काम आर्य समाज ही कर सकता है। आर्य समाज के सिवाय श्री कृष्ण के सच्चे स्वरूप को आम जनता के सामने कोई नहीं ला सकता। कृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर हमें गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिए कि हम कहां तक श्री कृष्ण के सच्चे स्वरूप को जनता के सामने ला रहें हैं। जन्माष्टमी का पर्व तो हर वर्ष आता रहेगा। इस पर्व और श्री कृष्ण के जीवन से प्रेरणा लेकर और दूसरों को उनका सच्चा स्वरूप बताकर हम इस पर्व को सार्थक कर सकते हैं।

दयानन्द मठ ढन्न मोहल्ला में सक्रान्ति का पर्व मनाया गया

महर्षि दयानन्द मठ (वेद मन्दिर) ढन्न मोहल्ला में 16 अगस्त 2013 को भाद्रपद मास की सक्रान्ति का पर्व प्रात: 7.00 बजे से 9.00 बजे तक मनाया गया। सर्वप्रथम हवन यज्ञ किया गया जिसे मठ के पुरोहित श्री संदीप शास्त्री जी ने सम्पन्न करवाया। गुरुकुल करतारपुर के प्रधान श्री चतुर्भुज जी मित्तल अपनी धर्मपत्नी सहित यजमान बने। वेद की पावन ऋचाओं के द्वारा यजमान सहित सभी श्रद्धालुओं ने श्रद्धा से यज्ञ में अपनी आहुतियां अर्पित कीं। हवन यज्ञ के पश्चात् सुन्दर भजन हुए। इसके पश्चात् श्री सुरेश कुमार शास्त्री जी का प्रवचन हुआ जिसमें उन्होंने सक्रान्ति के महत्त्व के बारे में बताया और सभी को वेद मार्ग पर चलने का उपदेश दिया। अंत में मठ के यशस्वी प्रधान सेठ श्री कुन्दन लाल जी अग्रवाल ने सभी का धन्यवाद किया और श्री यशपाल आर्य के भजन की पंक्तियां सुनाकर सबको भावुक कर दिया। इस कार्यक्रम में सर्वश्री रवि मित्तल जी, प्रकाश चन्द्र सुनेजा, सत्यशरण गुप्ता, बलराम गुप्ता, राम भुवन शुक्ला, अरुण तलवाड़, राजेन्द्र विज आदि ने भाग लिया।

-कुन्दन लाल अग्रवाल प्रधान दयानन्द मठ

www.thearyasamaj.org

पृष्ठ 1 का शेष- आदर्श चरित्र.....

श्री कृष्ण जी योग विद्या को जानने वाले थे। गीता के पढ़ने से ऐसा स्पष्ट होता है। बिना संयम के कोई योगी नहीं बन सकता। इसलिए हम श्री कृष्ण को योगीराज भी कहते हैं। आदर्श चरित्र श्री कृष्ण जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन उदाहरणों से भरा पड़ा है परन्तु पुराणों ने उनके उज्जवल चरित्र का लोप कर दिया है और उसकी जगह श्रीकृष्ण को माखन चोर, रासलीला रचाने वाला, लम्पट और कामी बना दिया है। बहुत से दोष उनके चरित्र पर लगा दिए हैं जिसके कारण अन्य मत वाले श्री कृष्ण जी की बहुत निन्दा करते हैं। जन्माष्टमी के इस पावन पर्व को जहां हमें उत्साहपूर्वक मनाना चाहिए वहीं उनके उज्जवल चरित्र को जन मानस के सामने लाने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि जो भ्रांतियां श्री कृष्ण जी के बारे में लोगों में फैल चुकी हैं वो दूर हो और वे श्री कृष्ण के सच्चे रूप को, उनके उज्जवल चरित्र को जिसका वर्णन महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में किया है, उसे जान सके। श्रीकृष्ण का जीवन और उनके उपदेश हमारे लिए पथ प्रदर्शक हैं, यदि हम उन्हें समझ लें तो अपने लक्ष्य में हम सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

पृष्ठ 4 का शेष- महान राजनीतिज्ञ.....

इसी प्रकार गुरु द्रोणाचार्य जब परास्त नहीं हो रहे थे तो अश्वत्थामा नाम का हाथी मार कर युधिष्ठिर से कहलवा दिया कि अश्वत्थामा मारा गया। यह सुनकर द्रोणाचार्य ने हथियार रख दिये और धृष्टद्युम्न ने उसे समाप्त कर दिया। कर्ण का रथ भूमि में धंस गया। रणनीति अनुसार उसे निकालने का अवसर देना चाहिये था और उसने अवसर मांगा परन्तु श्री कृष्ण ने उसे अभिमन्यु वध व द्रोपदी अपमान की घटना सुना कर उसका मुंह बंद कर दिया। उसे समाप्त कर दिया। जयद्रथ वध, दुर्योधन वध और दूसरे कई बड़े-बड़े महारथियों के वध इसी प्रकार अपनी रणनीति द्वारा श्री कृष्ण ने ही करवाये थे। इससे पता चलता है कि वह कितने बड़े राजनीतिज्ञ और बुद्धिमान थे। आओ 28 अगस्त को उनका जन्म दिवस मनाते हुये उनके जीवन से कुछ शिक्षा ग्रहण करें।

पृष्ठ 2 का शेष- योगीराज श्रीकृष्ण.....

अपने कार्य व्यवहार से वह गोकुल वासियों को ही नहीं बल्कि आसपास के लोगों को भी प्रभावित करता रहा। कंस के गुप्तचरों ने श्री कृष्ण की प्रतिभा की जानकारी कंस को दी। वह कंस जो पहले मृत्यु के भय से निश्चिन्त हो गया था फिर चिन्तित हो गया था क्योंकि इंसान अपने पापों से डरता है। चूंकि कंस पापी वृत्ति का था इसलिये उसने अपने जीवन में जो पाप किये थे उनसे वह डरता था। उसने श्री कृष्ण को मरवाने के लिये कई षड्यंत्र रचे परन्तु वह इसमें सफल नहीं हुआ। एक दिन वह भी आया जब कंस ने मथुरा में श्री कृष्ण और बलराम दोनों को बुलाया और दोनों को मारने का षड्यंत्र रचा परन्तु महान बुद्धिमान, महान नीतिवान, महान ज्ञानवान्, महान बलवान, श्री कृष्ण ने भरी सभा में कंस को मंच से नीचे खींचकर सदा-सदा के लिये समाप्त कर दिया और इससे एक अत्याचारी का नाश हो गया। पुनः महाराजा उग्रसेन को राजगद्दी पर बैठाया गया। वासुदेव और देवकी को जेल से छुड़ाया गया। मथुरा में खुशियां मनाई गईं चारों तरफ प्रसन्नता की लहर दौड़ उठी।

28 अगस्त को फिर योगीराज श्री कृष्ण का जन्म दिवस आ रहा है जो अधर्म पर धर्म की विजय का प्रतीक है। इस महान योगी का जन्म दिन मनाते हुये हम उनके आदर्श जीवन का अध्ययन करें और उनके जीवन से प्रेरणा लें और उन्होंने हमेशा अधर्म के रास्ते पर चलने वाले लोगों का तिरस्कार किया और धर्मात्मा लोगों का साथ दिया। कौरवों पाण्डवों में भी उन्होंने धर्मात्मा पाण्डवों को चुना था और उनका साथ दिया था। वह अर्जुन के सारथि बने उसे गीता का ज्ञान दिया। जीवन का रहस्य समझाया। योग की परिभाषा समझाई, जीवन की वास्तविकता बताई। इसलिये हम भी अपने जीवन में धर्म के रास्ते पर चलने का निश्चय करें और धर्मात्मा लोगों का साथ दें। देशद्रोही विघटनकारी लोगों से देश को बचायें। निश्चय करें कि हमने दुष्ट प्रवृत्ति के लोगों से देश को बचाना है। आज पुनः देश को श्री कृष्ण जैसा राजनीतिज्ञ चाहिये, नीतिवान, धर्मात्मा और आध्यात्मिक नेता चाहिये जो सारे देश को एक सूत्र में पिरो सके, देश को संकट से उभार सके। आओ इस महान योगी के जीवन से प्रेरणा लें।

www.thearyasamaj.org

योगीराज श्री कृष्ण

-लेखक श्री अमित शास्त्री पुरोहित आर्य समाज नवां शहर (पंजाब)

भगवान राम तथा भगवान श्री कृष्ण ने भारतीय जन जीवन को सर्वाधिक प्रेरित प्रभावित एवं अनुप्राणित किया है देश के जन मानस में इन्हीं दो दिव्य पुरुषों को सर्वोपरि लोकप्रियता मान्यता तथा श्रद्धा प्राप्त हुई क्योंकि इन दोनों का सारा जीवन वेदानुकूल था। श्री कृष्ण तो अपने वेदोक्त कर्त्तव्य कर्म के प्रति इतने जागरुक थे कि गीता में वह स्वयं कहते है।

यद्यदाचरतिश्रेष्ठ : तद्तद्देवेतरो जनः
स यत्प्रमाण कुरूते लोकस्तदनु वर्तते॥

अर्थात् महापुरूष जब जैसा आचरण करते है सामान्य जनता उसी का अनुकरण करती है।

बन्धुओं लोगों में यह भ्रम पैदा कर दिया गया कि आर्य समाज से सम्बन्ध रखने वाले आर्य लोग भगवान कृष्ण को नहीं मानते अतः लोग यह मान लेते है कि आर्य समाजी कोई अन्य ही मत पंथ या मजहब होगा परंन्तु यह सब भ्रांन्ति स्वार्थी तत्वों ने जान बूझ कर फैलाई कि कही आर्य समाज जिस प्रकार से भगवान कृष्ण को मानते व जानते है वैसे अन्य सब लोगों को पता लग गया तो उनकी उदर पूर्ति कैसे होगी ?

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द जी अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' के एकादश समुल्लास में श्री कृष्ण जी के बारे में लिखते है। कि

श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है जिनमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त कुछ भी किया हो। ऐसा नहीं लिखा लेकिन श्री कृष्ण का वह रूप जो हमारे सामने आज भागवत आदि का नाम लेकर कहा व स्वांग किए जा रहे हैं वह हम अपने भगवान श्री कृष्ण का अनादर ही करते है लगता है यह भागवत पूर्ण रूप से किसी हिन्दू धर्म को मानने वाले ने नहीं लिखी अपितु हमारी श्री कृष्ण के प्रति अश्रद्धा, अनादर, की ही भावना पैदा होगी जो लोग भगवान श्री कृष्ण को ईश्वर का अवतार इस श्रेणी में धकेल रहे है वे भगवान श्री कृष्ण की इस बात को बड़े ही ध्यान से पढ़े श्री कृष्ण जी महाभारत के उद्योग पर्व में स्वयं कह रहे है

अहं हि तत्करिष्यामि पर पुरुषकारतः
दैवं तु न मया शक्ये कर्म कर्तुं कथंचन

मैं यथा साध्य मनुष्योचित प्रयत्न कर सकता हूँ। परन्तु दैव के कार्यों में मेरा वश नहीं भगवान कृष्ण के जीवन के अन्य अनेक प्रकरणों से भी सुस्पष्ट है कि महामना श्री कृष्ण ईश्वरावतार न होकर महान् योगी, अत्यन्त मेधावी, राजनीतिज्ञ, महान कूट नीतीज्ञ, शूरवीर एवं ऋषि दयानन्द के शब्दों में आप्त पुरुष थे आर्य समाज तो श्री कृष्ण को उस धरातल पर देखता है जहाँ पर मानवता देवत्व से संयुक्त होती है

जिज्ञासा हो सकती है कि श्री कृष्ण जब ईश्वरावतार नहीं थे तो उन्हें बार-बार भगवान क्यों कहा जाता है तो हमें पहले यह बात सही ढंग से समझनी होगी कि भगवान का अर्थ क्या होता है भग के अनेक अर्थ हमारे संस्कृत वाड्मय में मुख्यतया मिलते है जो इस प्रकार से है-

भग-(1) उन्नति (2) महानता (3) यश (4) श्री (5)सद्गुण (6) नीति धर्म (7) पुरूषार्थ (8) वैराग्य (9) ज्ञान (10) धर्म इत्यादि अनेकों अर्थ हमें मिलते है और वान का अर्थ होता है वाला जैसे कि रथवान, विद्वान। अब भग के इतने अर्थों में एक गुण भी जिस मानव में होगा वह मानव भगवाला अर्थात् भगवान कहलाता है। आर्य समाज के कुछ लोग प्रायः ऐसी शंका करते व कहते सुने गए है कि हम तो श्री कृष्ण को भगवान नहीं मानते यह भग का अर्थ उन के लिए विशेष रूप से लिखा गया है ताकि अन्य लोगों ने जो गलत धारणा आर्य समाज के खिलाफ फैला रखें है उनका पोषण न करें अपितु सही अर्थ को जानकर श्री कृष्ण भगवान का शुद्ध चरित्र उनके पास रखने का प्रयास करें ताकि उस

www.thearyasamaj.org

महामानव श्री कृष्ण की निन्दा कोई न कर पाऐं और आर्यों पर जो न मानने की बात लगा रखी है वह भी हट जाए कतिपय महापुरुषों को ही हम भगवान कह कर पुकारते या याद करते है अत: इन्हें भगवान कह कर सम्बोधित करना आश्चर्य ही क्या परमात्मा भी इन भगों से परिपूर्ण होने से भगवान् है और श्रेष्ठ पुरुष जिनमें भग शब्द का जो अर्थ है वैसा गुण है तो वह भी भगवान है। अब भगवान श्री कृष्ण के महान गुण जिन गुणों के कारण वह भगवान कहलाए उनका संक्षिप्त में वर्णन करते हैं।

छात्रावस्था एवं लोक नायकत्व-श्री कृष्ण का जन्म भाद्रपद की अष्टमी को कठिन परिस्थितियों में कंस के कारागार में हुआ, किस प्रकार से गुप्त रूप से उन्हें पालन पोषण के लिए गोपाधिपति नन्द के यहाँ पहुंचा दिया गया और किस प्रकार से छोटी अवस्था में ही उन्होंने अपनी अपूर्व तेजस्विता और वीरता का परिचय देकर लोगों को चकित कर दिया यह कथा प्रसिद्ध है।

गोकुल के पास ही गुरुकुल में श्री कृष्ण तथा बलराम की शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध किया। वहाँ उन्होंने निष्ठा पूर्वक शास्त्रों का अध्ययन किया। वेद, वेदांग, धनुर्वेद, स्मृति मीमांसा तथा न्याय शास्त्र उनके पाठय क्रम में थे। इसके अलावा सन्धि, विग्रह यान आसन आदि भेदों से युक्त राजनीति का अध्ययन श्री कृष्ण ने किया। आचार्य सांदीपनि के यहां रहकर ६४दिनों में ही धनुर्वेद में निष्णान्त हुए तथा घोर अङ्गिरस के चरणों में बैठ कर उन्होंने ब्रह्म-विद्या प्राप्त की गुरुकुल में वे अपने सहपाठी सुदामा आदि के साथ वन से समिधा तथा फल आदि लाते तथा गोपालन गुरु सेवा में समान रूप से तत्पर रहते थे।

उनमें जन-नेता के गुण प्रारंम्भ से ही दृष्टि गोचर होने लगे थे अरिष्ट नामक पागल बैल व दुर्दम्य केशी नाम के घोड़े को मारकर उन्होंने गोकुल वासियों के कष्टों को दूर किया श्री कृष्ण अपने सेवा भाव से जन मानस के सम्राट बन गए। इस प्रकार जब स्नातक बन कर किशोर कृष्ण ने अंगडाई ली तो विखण्डित भारत का कारुणिक, चित्र बड़ी गम्भीरता से देखा। उस समय भारत पतनोन्मुख हो चला था समस्त सामाजिक मर्यादायें ढह रही थी देश खण्ड खण्ड होकर बिखर रहा था- महाभारत के रचनाकर महर्षि व्यास ने स्थिति का चित्रण यों किया है-

गृहे गृहे हि राजान: स्वस्य स्वस्य प्रियंकरा :

अर्थात् घर घर में राजा लोग मौजूद है और केवल अपने ही हित में लगे हुए है तो भगवान श्री कृष्ण बड़े सुनियोजित ढंग से राजाओं दैवी सिद्धान्त को शिथिल कर प्रजावत्सल्य चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना में जुड़ गए इस कार्य का शुभारंम्भ उन्होंने मथुरा से किया जहां राजा उग्रसेन का पुत्र कंस जरासन्ध के समर्थन से अपने पिता को बंन्दी बनाकर प्रजा को नाना प्रकार के कष्ट दे रहा था। गोपों के यहां से दूध मक्खन को जबरन ले जा कर अपने यहां मल्लों को खिलाकर निर्बलों को सता रहा था सर्व प्रथम श्री कृष्ण ने वह मक्खन देना बन्द करवा दिया अगर वहां कोई डर के मारे ले जाने लगता तो रास्ते में श्री कृष्ण साथियों सहित मक्खन व दूध स्वयं लेकर खा लेते परन्तु कंस के यहां नहीं जाने देते जिसके परिणाम स्वरूप कंस कुद्ध होकर जब गोकुल वासियों पर अत्याचार करने के लिए मल्लों अत्याचारियों के भेजते तो श्री कृष्ण उन्हें पछाड़ देते फिर कंस ने अपने बड़े ही बलशाली चाणूर को युद्ध के लिए भेजा श्री कृष्ण ने मल्लयुद्ध में उसे मार दिया और अत्याचारी कंस को भी मल्युद्ध में मारकर अपनी शक्ति का परिचय दिया और मथुरा के राज सिंहासन पर यादवों के संघ की पुन: स्थापना कर नाना उग्रसेन को उसका अधिपति बना दिया इस प्रकार भगवान श्री कृष्ण की बाल्य अवस्था व किशोरवस्था समाप्त हुई लेकिन दुष्ट लोगों ने श्री कृष्ण के चरित्र को छलछिद्र पूर्ण बनाकर अनेकों कपोल कल्पनाएं अपने भगवान के साथ जोड़ कर उनके पावन जीवन को बहुत ही घटिया बना कर सामने रखा ताकि सब उस महामानव व भगवान के गुणों की ओर ध्यान न देकर उन्हें चोर झूठा, रसिया, लम्पट इत्यादि समझ कर मजाक का पात्र बनाऐ हे बुद्धि जीवी लोगों सुनो और विचार करो कि आप भगवान कृष्ण का मान नहीं अपितु अपमान कर रहे हो अगर श्री कृष्ण का जीवन जानना चाहते हो तो महाभारत पढ़ो व श्री कृष्ण भगवान का अमर ग्रन्थ शुद्ध गीता पढ़ो लांछन लगाने से पूर्व महाभारत का यह श्लोक पढ़ो जिसमें राजसूय यज्ञ के पश्चात् दीक्षा पूर्ण होने युद्धिष्ठर ने जब भीष्म पितामह से पूछा कि सर्वप्रथम किसे अर्घ्य दिया जाए तो पितामह ने कहा था

वेद वेदांग विज्ञानं बलं चाप्याधिकं तथा
नृणां लोके हि कोऽन्योस्ति विशेष: केशवादृते॥
दानं दाक्ष्यं श्रुतं शौर्य्य हि कीर्तिबुद्धिरूतमार
सनति श्री घृति स्तुष्टि: पुष्टिश्चमियताच्युते

(शेष पृष्ठ 19 पर)

www.thearyasamaj.org

श्री कृष्ण की बसीठी (दूतकर्म)

-लेखक स्व. चमुपति जी

पाञ्चाल-पुरोहित पाण्डवों का संदेश कौरवों के पास ले गए, परन्तु वहाँ आपत्ति यह उठाई गई कि प्रतिज्ञा में राज्य का लौटाना न था। भीष्म की सम्मति थी कि लड़ाई न हो, परन्तु कर्ण आदि बिना लड़े मानते ही न थे। अन्त को धृतराष्ट्र ने संजय को दूत बनाकर पाण्डवों के पास भेजा। संजय ने बार-बार युधिष्ठिर को वैराग्य-धर्म का उपदेश किया कि ''यदि तुम्हारी जय भी हो जाए तो इससे क्या लाभ होगा ? कुल का क्षय मुफ़्त में हो जाएगा। इस विनाशी संसार में स्थिर पदार्थ तो कोई है नहीं। फिर किसलिए लड़ना ?'' युधिष्ठिर ने कहा-''हम अपना अधिकार ही तो माँगते हैं ! यदि शान्ति से मिल जाय तो युद्ध की आवश्यकता नहीं !'' अन्त में श्री कृष्ण ने उसे वैराग्य के उपदेश का उत्तर दिया। इन्होंने कहा-''धर्म प्रत्येक वर्ण और आश्रम का अपना है। क्षत्रिय को अपना अधिकार नहीं छोड़ना चाहिए। यह वैराग्य-धर्म उस समय कहाँ गया था, जब शकुनि ने छल से युधिष्ठिर का राज्य छीना था ? उस समय वैराग्य कहाँ गया था जब द्रौपदी का भरी सभा में अपमान हुआ था ? विदुर के सिवाय उस समय किसी के मुँह में जुबान भी थी ? द्रौपदी ही की बुद्धि ने उस समय पाण्डवों को मृत्यु के मुख से बचा लिया, नहीं तो सारे कुल का बण्टाढार हो ही चुका है। अस्तु, अब मैं स्वयं वहाँ जाऊँगा और दुर्योधन को समझाऊँगा। यदि समझ गया तो मुझे भी पुण्य होगा और कौरव भी मृत्यु-पाश से बच जाएँगे, नहीं तो फिर भीम की गदा और अर्जुन के तीर अपने-आप निपटारा करा लेंगे। हमारी दृष्टि में पाण्डव और कौरव एक ही महाद्रुम की शाखाएँ हैं। इन्हें इकट्ठा फूलना-फलना चाहिए। यह न हो सके तो जो हो सके वही कीजिये। पाण्डव सन्धि के लिए भी तैयार हैं, विग्रह के लिए भी।''

संजय लौटने लगा तो युधिष्ठिर ने हस्तिनापुर में रहने वाले सभी सम्बन्धियों के लिए यथायोग्य सत्कार तथा प्यार के संदेश दिये।

संजय ने धृतराष्ट्र को यह सब वृत्तान्त कह सुनाया।

इधर श्री कृष्ण भी हस्तिनापुर जाने की तैयारी करने लगे। पांडव स्वयं तो इनके जाने की आवश्यकता ही नहीं समझते थे, परन्तु फिर इनकी सम्मति के आगे सिर भी झुका देते थे। इन्होंने उन्हें समझाया-''देखो भाई ! संसार में घटनाओं के दो आधार हैं-एक पुरुषार्थ, दूसरा दैव। मैं पुरुषार्थ तो कर सकता हूँ, दैव मेरे अधीन नहीं। फल क्या, क्या न होगा, यह मैं नहीं जानता। मुझे तो इतना ही ज्ञान है कि मुझे शक्ति-भर प्रयत्न करना चाहिए। यदि दुर्योधन नहीं माना, तो भी मैं उसकी करतूत वहाँ एकत्र हुए राजाओं के आगे प्रकट कर आऊँगा। इससे भी युधिष्ठिर का कार्य सधेगा।'' श्री कृष्ण को लोकमत पर बड़ा विश्वास था। वे लोकमत को अपने साथ रखने का कोई अवसर जाने न देते थे। शत्रु यदि अपने-आपको अधर्म पर समझता हो तो उसका हृदय अन्दर से खोखला हो जाता है। तब उसके वैर में जान नही रहती। और फिर मित्रों तथा तटस्थों का अनुकूल मत तो एक अलौकिक सहायक शक्ति है ही। लड़ने चलो और लोगों के हृदय तुम्हारे साथ हों तो फिर इस लड़ाई के क्या कहने ! तुम्हारा अपना बल ही शत-गुणा बढ़ जाएगा।

पांडवों के वाद-विवाद को शान्त कर एक दिन कृष्ण हस्तिनापुर को चल पड़े। रास्ते में सायंकाल हो गया। श्री कृष्ण ने रथ से उतरकर संध्या की। रात वहीं रास्ते में काट दी। दूसरे दिन हस्तिनापुर पहुंचे। बड़े ठाठ-बाट से इनका स्वागत हुआ। राजा धृतराष्ट्र से मिलकर ये अपनी फूफी पृथा के पास गए। वह बेचारी १३ वर्ष से अपने पुत्रों से बिछुड़ी विदुर के यहाँ कष्ट के दिन काट रही थी। कृष्ण को गले लगा-लगाकर रोई। उसने कहा-''मेरा तो सारा जीवन ही एक दीर्घ आपत्ति है। बचपन में गेंद खेलती को पिताजी ने कुन्तिभोज के समर्पण कर दिया। कुन्तिभोज ने कौरवों के अर्पण किया। पहले पतिदेव के साथ वनवास में रही, फिर पुत्रों के साथ लाक्षागृह से निकल जंगलों की धूल छानी। इन्द्रप्रस्थ में कुछ आराम मिला था कि फिर पुत्रों से वियुक्त हो गई। पांडवों ने

www.thearyasamaj.org

पिता का वियोग देखा ही था, पर माता से कभी अलग न हुए थे। अब पूरे १३ वर्ष मुझसे भी जुदा रहे हैं। क्या जाने, कैसे हैं ? फूलों के सेज पर सोने वाली द्रौपदी पर जाने बीहड़ जंगलों में कैसी बीती ? अर्जुन की वीरता का भरोसा है। आशा करती हूँ, दिन पलटेंगे। आप उन सबका कुशल समाचार सुनाइये।''

कृष्ण ने पांडवों के कुशल-पूर्वक होने का सुसमाचार दिया। उनके विमल चरित्र की प्रशंसा की; कहा-''वे भट्टी में पड़कर कुन्दन हो गए हैं।'' फूफी को ऐसे वीरों की माता होने पर बधाई दी और आश्वासन दिया कि विजय उन्हीं की होगी। इसके पश्चात् कृष्ण दुर्योधन के यहाँ गए। उसके यहाँ भी मधुपर्क स्वीकार किया। तब बह खाने-पीने का प्रबन्ध करने लगा। इन्होंने खाने से इन्कार कर दिया। उसने कारण पूछा, तो कहा-''भोजन खिलाने में दो भाव काम करते हैं- एक दया, दूसरी प्रीति। दया दीन को दिखाई जाती है। सो दीन तो हम हैं नहीं। रही प्रीति, वह आप में नहीं है। हमारा कार्य सिद्ध हो गया तो भोजन भी कर लेंगे। आप अपने ही भाइयों से वृथा द्वेष करते हैं, हमें क्या खिलाइयेगा ? उनका धार्मिक पक्ष है, आपका अधार्मिक। सो जो उनसे द्वेष करता है, वह हमसे भी। हम-वे एक हैं।''

ये खरी-खरी बातें दुर्योधन को सुना, कृष्ण ने रात का आवास विदुर के यहाँ किया। विदुर इससे पूर्व युद्ध के टालने का प्रयत्न बहुत बार कर चुका था। उसकी किसी ने न सुनी थी। वह कृष्ण का भक्त था। उसने कहा-''आप वृथा आए हैं। ख़ामख़ाह अपनी अप्रतिष्ठा कराएँगे। यहाँ तो राजमद के कारण भली बात भी बुरी हो जाती है। भीष्म, द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, जयद्रथ-इतने वीर जिसकी ओर से लड़ने वाले हों, जो भारत-भर की सेनाएँ अपनी सहायता के लिए प्राप्त कर चुका हो, फिर हो मूढ़, स्वेच्छाचारी और लोभी, वह धर्म की बात काहे को सुनने लगा ? दुष्टों की सभा में आप-जैसे नरश्रेष्ठ का जाना अप्रतिष्ठा ही का कारण होगा।''

श्री कृष्ण गंभीर होकर बोले-''दुर्योधन की दुष्टता का मुझे ज्ञान है। परन्तु सारी पृथिवी रुधिर से लिथड़ती देख रहा नहीं जाता। कितना रुधिर बहने को है ! कैसी भयानक आपत्ति संसार पर आएगी, यह सोच विवश हो गया हूँ। ऐसे समय जो मनुष्य इन करोड़ों लड़ैतों को मृत्यु के मुख से खींच ले, वह अत्यन्त पुण्य का भागी होगा। यह भीड़ (विपत्ति) दुर्योधन और कर्ण की लाई हुई है। उन्हें समझाऊँगा। लाख वैरी हों, आखिर अपने हैं। जो मित्र को किसी व्यसन का शिकार होता देख बचाता नहीं, वह क्रूर है। आपत्ति में पड़ते आत्मीय को केशों से पकड़कर भी खींचने का यत्न करे, तब मनुष्य निन्दा का पात्र नहीं होता। मैं तो कौरवों के हित की भी कहूँगा, पांडवों के भी भले की। यदि दुर्योधन को फिर भी शंका बनी रहे तो बनी रहे। मेरा अपना हृदय संतुष्ट होगा। मेरे सिर से कर्त्तव्य का भार उतर जाएगा। फिर कोई यह न कह सकेगा कि कृष्ण ने दो बांधव-दलों को लड़ते देखा और उन्हें छुड़ा न दिया, वह चाहता तो छुड़ा सकता था। मैं चाहता हूँ शान्ति हो जाय। पांडवों के अधिकार का लोप न कर, और सब उपाय उसके शान्ति के लिए करूँगा।''

प्रातःकाल संध्या-हवन से निवृत्त हो श्री कृष्ण धृतराष्ट्र की सभा में जा विराजे। देश-विदेश के राजा तो वहाँ आए ही हुए थे। आज इस सभा में यह निर्णय होना था कि भारत-संतान एक-दूसरे का वध कर पृथिवी को अनाथ बनाएगी या भाइयों-भाइयों में शान्ति-पूर्वक सन्धि होने से देश तथा जाति की समृद्धि होगी ? इस पुण्य अवसर पर ऋषि, महर्षि, सब कौरव-सभा में एकत्र हुए। आकाश से मानो देवता भी कृष्ण के दूतकर्म का परिणाम सुनने को उत्सुक थे। कृष्ण की वक्तृता प्रारम्भ होने से पूर्व ही सभा में सन्नाटा छा गया। कृष्ण ने धृतराष्ट्र को सम्बोधित कर कहा-

''इस समय भारतवर्ष में आपका कुल श्रेष्ठ है। इसमें विद्या है, शील है, दयालुता है, सरलता है, सत्य है। वृद्ध होने से इस कुल के आधार आप हैं। परन्तु आपकी सन्तान बिगड़ रही है। उन्होंने धर्म, अर्थ, दोनों छोड़ रक्खे हैं। मर्यादा में न रहकर वे अपने भाइयों से ही क्रूरता का व्यवहार कर रहे हैं। इसका परिणाम वह घोर आपत्ति है जो इस कुल पर आने वाली है। यदि इसका प्रतिबन्ध न हुआ तो संसार का क्षय हो जाएगा। आप चाहें तो इसे रोक सकते हैं। इस समय भारत का भाग्य एक आपके अधीन है, दूसरे मेरे। आप कौरवों को रोकिये, मैं पाण्डवों को रोक दूँगा। यदि आज आप पाण्डवों को अपने पक्ष में कर लें तो संसार में आपको जीतने वाला कोई न रहेगा। पाण्डव बड़ी शक्ति हैं और वह शक्ति आपकी हो सकती है। और जो युद्ध हो ही गया तो राजा सभी देशों के आए ही हुए हैं। वे लड़ेंगे और सारी प्रजाओं का नाश करा देंगे। महाराज ! इन निरपराध प्रजाओं का वास्ता ! इन्हें बचाइये ! विमल आचार के निष्कलंक आर्य लोग आपस में

www.thearyasamaj.org

लड़-लड़कर मर जाएँगे। इन्हें बचाइये ! कौरवों-पाण्डवों में सन्धि हो जाए तो सभी राजा लोग इकट्ठे खा-पी तथा मंगल मनाकर अपनी-अपनी राजधानियों को लौट जाएँ। पाण्डव तो बचपन से ही आपके पास पले हैं। वही वात्सल्य-दृष्टि उनमें फिर से रखिये। पाण्डवों ने आपको अभिवादन कर यह कहा-'हमने द्यूत की शर्त पूरी कर दी। बारह वर्ष वनवास और एक वर्ष अज्ञातवास का घोर व्रत पूरा कर दिया। अब आपको अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहिए। हमारी आपमें पितृ-बुद्धि है। आप हमें पुत्रबुद्धि रखिये।' आपकी सभा में कई वृद्ध आप्त पुरुष विद्यमान हैं। उनके रहते यहाँ सत्य का लोप नहीं हो सकता। यदि मेरा विचार धर्म-अर्थ का विरोधी नहीं तो आप इसका अनुसरण कीजिये। युधिष्ठिर के धैर्य को देखिये कि प्राप्त किये साम्राज्य को, एक बार स्वीकार किये नियम के लिए झट त्याग दिया। द्रोपदी के अपमान को सह गया। आप अब उनसे वह व्यवहार कीजिये जो क्षत्रियों की आन के अनुकूल हो। मृत्यु के मुख में दौड़ी जा रही प्रजा की रक्षा आपके हाथ में है।''

श्री कृष्ण की वक्तृता का उत्तर किसी को क्या देना था ? इसमें कुल के नाम से भी अपील थी। धृतराष्ट्र के पितृ-भाव से भी अभ्यर्थना थी। लोक-क्षय का चित्र भी खींच दिया गया था। सन्धि से धर्म के साथ स्वार्थ की सिद्धि भी दर्शा दी गई थी। हल्के शब्दों में कौरवों के छल तथा द्रौपदी के सभा में लाए जाने की अश्लील अशिष्टता की ओर भी संकेत कर दिया गया था। दूसरे शब्दों में, श्री कृष्ण ने अनुनय भी की, प्रलोभन भी दिखाया, लजाया भी। धृतराष्ट्र पर इस वक्तृता का यथेष्ट प्रभाव पड़ा। उसने दुर्योधन को बीसियों गालियाँ दे दीं और कह दिया कि यही पापी नहीं मानता। भीष्म समझा चुके, विदुर समझा चुके, गांधारी ने प्रयत्न कर लिये, पर यह किसी की सुने भी !

श्री कृष्ण ने अब दुर्योधन को सम्बोधित कर अत्यन्त मधुर शब्दों में कहा-

''भाई ! जब पैदा एक महान् कुल में हुए हो, विद्या साथ-साथ प्राप्त की है, शूर हो, फिर शील क्यों कुल-हीनों का-सा व्यवहार दिखाते हो ? अपने भाइयों से व्यर्थ का वैर, और परायों के सहारे इतना गर्व ? अपने सारे मित्रों में कोई अर्जुन और भीम-सा बली दिखाओ तो सही ! अच्छा, युद्ध हो ही गया, उसका परिणाम ?-कुल का नाश। तुम्हें सभी कुलघ्न कहेंगे। सन्धि कर लो ! धृतराष्ट्र राजा रहें और तुम युवराज। क्यों? है स्वीकार ?''

इस पर भीष्म, विदुर, द्रोण, सबने समझाया, परन्तु दुर्योधन ने एक न सुनी। उसने कहा-''जब तक धृतराष्ट्र स्वयं राज्य करते थे, मैंने हथियार डाल रखे थे। परन्तु जब इन्होंने राज्य मुझे दे दिया, चाहे अज्ञान से चाहे भय से, तो अब तो मेरी ही चलेगी। मैं सुई की नोक-भर भूमि भी पांडवों को न दूँगा। उन्होंने राज्य जुए में हारा है। इसमें हमारा अपराध क्या ? अब वे अशक्त पुरुषों की तरह समर्थों पर वृथा क्रोध झाड़ रहे हैं।''

अब तक श्री कृष्ण ने दबे-दबे शब्दों में उलाहने दिये थे। दुर्योधन के इस कथन ने उन्हें खुला बोलने का अवसर दे दिया। उन्होंने उसे भीम को विष देने, लाख का घर बनवाने और उसमें पाण्डवों को डाल उसे आग लगा देने का मनसूबा बाँधने की घटनाएँ स्मरण कराईं। फिर पूछा-क्या ये अपराध नहीं ? जुए की निन्दा की और कहा-''इस दुष्कर्म के लिए निमन्त्रण ही महान् अपराध है। फिर उसमें छल करना और हारे हुए भाइयों को दास बनाना, यही नहीं, भावज को भरी सभा में बुलाना और उससे न कहने की एक नहीं, बीसियों बातें कह डालना-क्या ये सब काम भले मानसों के थे ?'' कृष्ण ने दुर्योधन से स्पष्ट कह दिया-''अब तो लड़ाई होकर रहेगी ! सो तैयार हो जा ! तुझे होश तब आएगा जब शत्रु की शूरता तुझे रणभूमि में सुला देगी। शान्ति अच्छी थी, तू उसे ठुकरा रहा है।''

श्री कृष्ण की यह भर्त्सना सुन दुर्योधन सभा से उठ गया। इस पर श्री कृष्ण ने अपने कुल का उदाहरण देकर कहा-''हमारे यहाँ कंस ऐसा ही कुलांगार था। हमने सारे कुल की रक्षा के लिए उस एक दुराचारी को मार डाला। यही उपाय दुर्योधन का करना उचित है। उसे दुःशासन, कर्ण और शकुनि-सहित पाण्डवों के हवाले कर देना चाहिए। क्या इस एक के लिए सारे क्षत्रिय-वंश का नाश कर दिया जायगा ?''

धृतराष्ट्र ने विदुर को भेजकर गान्धारी को बुलवाया और उससे दुर्योधन को समझवाना चाहा, परन्तु उस हठी ने माँ की बात पर ध्यान ही न दिया।

श्री कृष्ण के आने से पूर्व ही दुर्योधन, शकुनि, कर्ण और दुःशासन उन्हें बन्दी कर लेने के मनसूबे बाँध रहे थे। अब उन्होंने अपने उस विचार को क्रियारूप में परिणत करना

www.thearyasamaj.org

चाहा। इसकी भनक सात्यकि के कान में पड़ गई। उसने हृदिक के पुत्र कृतवर्मा से, जो था तो वृष्णि परन्तु दुर्योधन की ओर से आगामी युद्ध में सम्मिलित होने वाला था, कहा-सेना तैयार कर लें। तत्पश्चात् सात्यकि ने यह सूचना श्री कृष्ण को दी, तो वे हँस दिये। धृतराष्ट्र पास खड़ा था। श्री कृष्ण ने उससे कहा-"मैं चाहूँ तो दुर्योधन को अभी बाँध लूँ। मुझे अकेला न समझिये। परन्तु ऐसा करना अधर्म है। मैं दूत हूँ, अधर्म न करूँगा। दुर्योधन अपना बुरा कर रहा है। अच्छा, जो इसे अच्छा लगे वह करे।"

यह कहकर श्री कृष्ण सभा से चल दिये। राजा लोग भी रथ तक उनके पीछे-पीछे गए। रथ में बैठे हुए कृष्ण पर धृतराष्ट्र ने फिर अपनी विवशता प्रकट कर क्षमा चाही। श्री कृष्ण ने कहा-"हाँ, आपका, भीष्म, द्रोण और शल्य आदि का जो पक्ष है, वह तो सभा में ही स्पष्ट हो गया था। आप सब तो युद्ध के विरोधी हैं, परन्तु दुर्योधन आपके वश में नहीं, यह दुःख की बात है।"

श्री कृष्ण सभा से उठकर फिर अपनी फूफी के पास गए। पृथा ने कहा-"युधिष्ठिर को संदेश देना-'यह समय दया का नहीं। सब कालों में अहिंसा क्षत्रिय का धर्म नहीं। तू राजा है। राजा काल का कारण है। वह जैसा चाहे समय को ढाल सकता है। उसका बाहुबल पीड़ितों की रक्षा करने के लिए है। स्वयं दीन बन भिक्षा माँगने के लिए नहीं। और तो और, इतना ही देख ले, १३ वर्षों से मैं औरों के टुकड़ों पर जी रही हूँ। यह वृत्ति कृपणता की है। तुझे जन्म देकर इस अवस्था में रहूँ? तू क्षत्रिय है, लड़ ! बाप-दादा की आन को डुबो नहीं! अर्जुन पुत्र से कहना-क्षत्राणी जिस दिन के लिए पुत्र-प्रसव की पीड़ा सहती है, वह दिन आ गया है। भीम से कहियो-यह समय प्रीति का नहीं। नकुल-सहदेव से कहना-बल-पराक्रम से जीते हुए भोग ही क्षत्रियों के लिए विहित हैं। द्रौपदी से कहना-बेटी ! तूने अपने कुल की आन के अनुरूप कठोर तप किया है। मुझे राज्य के चले जाने का इतना दुःख नहीं, पुत्रों के वनवास का इतना दुःख नहीं, जितना दुष्ट दुःशासन द्वारा तुझ नाथवती को अनाथा कर एक-वस्त्रा दशा में ही सभा में लाने और वहाँ पर अश्लील कटाक्ष किये जाने का है। अर्जुन और भीम का बल उसी अपमान के प्रतिशोध के लिए है। अच्छा, कृष्ण ! पाण्डवों से कहना-माँ सकुशल है। तुम्हारा कुशल चाहती है। कृष्ण ! मेरे बेटे तेरे पास धरोहर हैं, उनकी रक्षा करना !"

पृथा से विदा हो श्री कृष्ण उपप्लव की ओर चले। रथ में जहाँ सात्यकि को बिठाया, वहाँ कर्ण को भी साथ ले लिया। उससे कहा-"संभवतः आपको पता होगा कि आप वास्तव में सूत के पुत्र नहीं। आप कुन्ती के कानीन पुत्र हैं। शास्त्रों के अनुसार कानीन भी पुत्र ही होता है। यदि आप आज पांडवों के साथ होते तो राज्य के अधिकारी आप थे। युधिष्ठिर आपसे छोटे हैं। दुर्योधन की ओर से अब आप अपने भाइयों का ही खून करेंगे ? फिर यह भी आप जानते हैं कि विजय पांडवों की होनी है। अर्जुन-सा बहादुर इस ओर कौन है ?"

कर्ण ने कहा-"मैं अपने जन्म को भी जानता हूँ, यह भी जानता हूँ कि कौरवों का पराजय ही होना है। इनके चिह्न ही ऐसे हैं। परन्तु अब तो मैं सूतों में मिलकर सूत हो ही गया। मेरा विवाह सूतों में हुआ। पुत्र-पौत्र हो गए। अब इस कुल को कैसे छोड़ सकता हूँ ? दुर्योधन की ओर भी आज नहीं हुआ। उसने मेरा सम्मान उस समय किया था, जब पाण्डवों ने मुझे सूत कहके दुत्कारा था। इस समय तक जिस दुर्योधन का कृपा-पात्र बना रहा, कड़ा समय आने पर उसे छोड़ दूँ ? लोग कहेंगे, डर गया। अब मुझे अपनी वर्तमान अवस्था में ही रहने दीजिए।" यह कह कृष्ण से गले मिलकर वह लौट गया।

श्री कृष्ण की बसीठी सफल नहीं हुई। यदि कृष्ण का कहना मान लिया जाता तो भारतवर्ष का उस समय से पीछे का इतिहास किसी और प्रकार से लिखा जाता। तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि कृष्ण के दूत बनकर जाने का कुछ भी लाभ नहीं हुआ। लाभ बहुत हुआ, यद्यपि वह लाभ नहीं जो कृष्ण चाहते थे। शान्ति-स्थापना से उतरकर कृष्ण का कर्तव्य था अपने पक्ष का नैतिक (सदाचार की) दृष्टि से पोषण करना, सो उन्होंने पूर्णतया तय कर लिया। इनके भाषण का उत्तर किसी से बना ही नहीं। दुर्योधन को भरी सभा में डाँट आए। उसके अपने पक्ष के राजाओं ने भी उसकी नैतिक दुर्बलता को जान लिया। धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, शल्य आदि ने तो स्वीकार भी कर लिया कि दुर्योधन वृथा हठ कर रहा है। यही कौरव-दल के मुख्य योद्धा थे। अपने पक्ष को नैतिक दृष्टि से खोखला और निराधार जानते हुए वे जिस उत्साह से लड़ेंगे, वह भी स्पष्ट है। गान्धारी ने इस मर्म को समझा था। उसने दुर्योधन को समझाते हुए कहा था-'इन द्वैध-ग्रस्तों की सहायता पर निर्भर न कर !' भीष्म-द्रोण ने स्वयं कृष्ण के

www.thearyasamaj.org

चले जाने पर भी उसे यही मन्त्रणा दी कि श्री कृष्ण की बात को मान ले। इससे स्पष्ट है कि कृष्ण की बात का प्रभाव इन प्रमुख वीरों के तथा औरों के हृदय पर यथेष्ट पड़ा। श्री कृष्ण ने कर्ण से भी कहलवा लिया कि विजय अर्जुन की होगी। वस्तुतः स्वयं हस्तिनापुर में अर्जुन की प्रशंसा का वातावरण ही बना दिया। शत्रु के घर में यह अवस्था पैदा कर देना अपनी विजय का रास्ता साफ कर जाना है। कृष्ण की बसीठी का फल मानसिक था। शत्रु के पक्ष के नीचे से जहाँ नैतिक (सादाचारिक) आधार खिसका दिया, वहाँ उनमें परस्पर फूट भी पैदा कर दी। भीष्म, द्रोण आदि एक ओर हो गए, कर्ण, शकुनि आदि दूसरी ओर। फिर भरी सभा में दुर्योधन को बन्दी कर पाण्डवों के हवाले कर देने का प्रस्ताव कर उपस्थित राजाओं के मन में भी यह अंकित कर दिया कि जिस नृपति-पुंगव का वे पक्ष ले रहे हैं, वह है कितने पानी में ? उसे बन्दी कर लेने का प्रस्ताव उसकी अपनी सभा में हो सकता है-यही एक प्रस्ताव उसके सारे प्रभाव को मिट्टी में मिला देने को पर्याप्त था।

अर्जुन के सारथि

विराट् की सभा ही में हमने देख लिया था कि कौरवों एवं पाण्डवों के मामले में वृष्णिवीरों की सहानुभूति दोनों पक्षों में बँटी हुई थी। श्री कृष्ण का झुकाव पाण्डवों की ओर था, तो बलराम का दुर्योधन की ओर। सात्यकि अर्जुन का शिष्य था। वह पाण्डवों ही का पक्षपोषक था। शिष्य कृतवर्मा भी था, परन्तु उसे हम सेनासमेत हस्तिनापुर में गया देख चुके हैं। कुरुक्षेत्र के युद्ध में उसका स्थान कौरव दल में वही था जो सात्यकि का पाण्डव दल में। वह उनके दस महारथियों में से था। युद्ध के समय हम एक ओर यादव जलसन्ध को भी कौरवों की ओर से लड़ता पाते हैं। इसकी गणना कौरवों के रथियों में है। इसके विपरीत चेकितान पाण्डवों का सहायक होकर लड़ रहा था।

श्री कृष्ण के लिए यह एक बड़ी समस्या हो गई। एक ओर प्राणों से प्यारा शिष्य, सखा, सम्बन्धी-एक शब्द में आत्मीय-अर्जुन था और उसका पक्ष न्यायानुमोदित था। फिर युधिष्ठिर को ही उस साम्राज्य का जो मुख्य बना चुके थे, उन्होंने मगध-साम्राज्य के स्थान पर एक बार तो स्थापित कर ही लिया था, परन्तु वह कतिपय भूलों के कारण स्थिर न रह सका था। अब भी कुछ न बिगड़ा था। यदि वे पाण्डवों को उनका पैतृक अधिकार कौरवों से दिला सकें तो फिर साम्राज्य की स्थापना यथापूर्व हो सकती थी। यों तो चेदि का राजा धृष्टकेतु, काशी का राजा बभ्रु, सृञ्जय, स्वयं अन्धकवृष्णि-ये सब श्री कृष्ण के संकेत पर चल रहे थे। परन्तु जो बात उन्होंने पाण्डव-पञ्चक में पाई, वह और कहीं न मिलती थी। एक-एक करके संभवतः पाण्डव में भी वह क्षमता न हो, पर पाँचों मिलकर एक विचित्र संस्थान-सा बन जाते थे, जो साम्राज्य के दुर्भर भार को उठा सकता था। श्री कृष्ण ने इस परिवार के साथ अपने-आपको एकीभूत-सा कर लिया था। और तो और, द्रौपदी इनकी सखी थी। पृथा इन्हें अपने पुत्रों से कम न समझती थी। सुभद्रा इनकी बहन ही थी। अभिमन्यु जहाँ दूसरा अर्जुन था, वहाँ दूसरा कृष्ण भी। सो एक ओर तो यह निजी घनिष्ठता थी और इससे बढ़कर एक धार्मिक साम्राज्य की स्थापना का स्वप्न भी था। दूसरी ओर ये अपने संघ के भी मुख्य थे। उस संघ को संगठित रखने में इन्हें कितनी कठिनाई होती थी, इसका वर्णन भी हम कर चुके हैं। यादव-वीर घमण्डी बड़े थे। बात-बात पर लड़ पड़ते थे। नित-नये फूट के सामान पैदा किये रहते थे। श्री कृष्ण ही तो विभिन्न स्वभाव यादवों में एकता के एक-मात्र सूत्र थे। इनमें सबकी अनन्य भक्ति थी। हस्तिनापुर में इनके कैद करने की बात अभी चली ही थी कि कृतवर्मा झट फौज लेकर सभा के द्वार पर आ खड़ा हुआ, यों चाहे उसे लड़ना कौरवों की ओर से ही था। अब यदि ये पाण्डवों के पक्ष के योद्धा हो जाएँ तो क्षत्रिय-धर्म के नियमानुसार इन्हें सात्वतों से भी लड़ना होगा। हम आगे चलकर देखेंगे कि इस क्षात्र-धर्म ने युद्ध में कई कड़ी समस्याएँ उपस्थित कर दीं। इस अवस्था में इनका सारे यादवों की प्रीति का एकसमान पात्र बने रहना असंभव था। संभावना यह भी थी कि यादवों के कई कुल इसलिए इनके आमरण विरोधी हो जाते कि उनके किसी वीर पर इन्होंने युद्ध में बाण चलाया था। फिर संघ के अस्त-व्यस्त हो जाने में देर ही क्या लगनी थी ? सारे यादव वीरों को एक ओर कर लेना इन्होंने अपनी शक्ति से बाहर पाया। यादवों की स्वतन्त्रताप्रिय प्रकृति ऐसे विषयों में स्वच्छन्द ही रहती थी। वे मिल सकते थे, या तो आत्म-रक्षा में या किसी यादव वीर की सहायता के लिए। पाण्डव इनके विशेष क्या लगते थे ? हरेक की अपनी-अपनी रुचि थी। अपना-अपना मेल तथा अपनी-अपनी मैत्री थी। श्री कृष्ण ने यही उचित समझा कि इस विषय में सबको

www.thearyasamaj.org

स्वतंत्र छोड़ दिया जाए। वही स्वतन्त्रता इनके अपने लिए भी थी। परन्तु इन्होंने अपनी विशेष स्थिति के कारण अपने ऊपर यह बन्धन भी लगा लिया कि ये होंगे तो पाण्डवों की ओर, पर निरस्त्र। साँप भी मर जाए, लाठी भी न टूटे। ये उस समय के योद्धाओं के शिरोमणि थे, परन्तु रण में शूरता से कहीं बड़ा गुण इनकी रण-निपुणता थी। पाण्डव इन्हें अपना कर्णधार रखना चाहते थे। जरासन्ध के वध से लेकर अब तक इनकी स्थिति इस कुल के सम्बन्ध में यही चली आई थी। ये अर्जुन के सारथि हो गए। अर्जुन पाण्डवों का मुख्य योद्धा था। इस प्रकार युद्ध की बागडोर भी इनके हाथ में रही और यादवों के वैमनस्य का भी अवसर न रहा।

श्री कृष्ण के इस निश्चय से बलराम के लिए मुश्किल पैदा हो गई। वह कृष्ण का साथ छोड़कर उनके विरोध में भी खड़ा न हो सकता था। कौरवों के सारथि होने की क्षमता भी उसमें न थी। वह तो सीधा-सादा हलधर था; नीति उसे छू न गई थी। दुर्योधन ने उसे अपनी ओर खींचना चाहा, पर उसने माना नहीं। वह तीर्थ-यात्रा को चला गया।

कृष्ण के इस निर्णय में नीति की वह चाल थी जो बड़े-बड़े नीतिज्ञों को दंग कर देगी। साम्राज्य को भी बचा लिया और संघ को भी हाथ से न जाने दिया। उधर समस्त देश का हित था, इधर सात्वत-वंश का। हित भी दोनों का साध लिया और बात भी अपनी बनाए रखी।

विश्व-रूप

युद्ध प्रारम्भ हो गया। श्री कृष्ण की सलाह से धृष्टद्युम्न पाण्डव-दल का मुख्य सेनापति हुआ। अर्जुन, जिसके सारथि श्री कृष्ण थे, सारी सेनाओं का संरक्षक बना। भिन्न-भिन्न अनीकों के अलग सेनापति भी थे। अर्जुन ने कृष्ण से कहा- ''मेरा रथ दोनों सेनाओं के बीच में ले चलिये। ज़रा हम देखें तो सही, हमें किन-किन योद्धाओं से लड़ना है ?'' कृष्ण रथ को हाँक चले। अर्जुन ने जिधर दृष्टि डाली, उसे दोनों दलों में अपने सम्बन्धी-ही-सम्बन्धी दिखाई पड़े। कहीं दादा, कहीं चाचा, कहीं ताऊ, कहीं श्वसुर, कहीं साला, कहीं मामा, कहीं भानजा, कहीं पुत्र, कहीं भतीजा, कहीं गुरु, कहीं गुरु-पुत्र। सभी तरफ यही दृश्य था। युद्ध इनमें होगा ? ये एक-दूसरे का खून करेंगे ? यह सोच के जी काँप उठा। जिनसे अस्त्र-शस्त्र चलाना सीखा, आज उन्हीं पर अस्त्र चलाने होंगे ? जिन्हें आज तक बाबा कहते रहे, आज उन्हें मृत्यु बन ललकारना होगा ? यह असम्भव है। फिर इस नरपिशाचता से लाभ क्या ? यही न कि कुछ रोज़ राज्य करने को मिल जाएगा ? गुरुजनों के लहू से लिथड़े ग्रास खाने से भूखों मरना अच्छा ! इससे भिक्षा ही क्यों न माँग लें ? फिर यह भी क्या निश्चय है कि विजय हमारी होगी ? विजय किसी की भी हो, खून लाखों-करोड़ों का बह जाएगा। लाखों घर बरबाद हो जाएँगे। लाखों विधवाएँ जीतों की जान को बैठी रोएँगी। बड़ों का पानी-देवा भी कोई न होगा। कुल-स्त्रियाँ आचार-भ्रष्ट हो जाएँगी। वंशों की मर्यादा जाती रहेगी। जाति में कुलटाएँ, कुलघ्न, कुलक्षणी लोगों की भरमार होगी। युद्ध के ये परिणाम सिनेमा के दृश्यों की तरह अर्जुन के सम्मुख आन की आन में मूर्त्त होकर गुज़र गए। अर्जुन को रोमांच हो आया। वह रथ ही में गाण्डीव छोड़कर बैठ गया। उसने कृष्ण को स्पष्ट कह दिया-मैं नहीं लड़ने का !

अर्जुन के इस विषाद का उपाय श्री कृष्ण ने गीता के उपदेश से किया। गीता संसार की अमर साहित्यिक कृतियों में से एक है। उसकी व्याख्या एक अलग ग्रन्थ चाहती है। हम उसकी व्याख्या अन्यत्र करने का विचार रखते भी हैं। यहाँ संक्षेप में उन दो-चार बातों की ओर संकेत किया जाएगा जिनका युद्ध से विशेष सम्बन्ध है।

श्री कृष्ण ने पहले तो अर्जुन को डाँटा। उन्होंने स्पष्ट कहा कि यह वृत्ति वीरों की नहीं, भीरुओं की है। तू अपनी समझ में ज्ञान की बातें कर रहा है; वास्तव में यह ज्ञानी होने की विडम्बना-मात्र है। ज्ञान का मृत्यु के भय से क्या सम्बन्ध है? मनुष्य दो चीज़ों का मेल है-एक आत्मा, दूसरा शरीर। शरीर है ही अनित्य। आत्मा को कोई मार नहीं सकता; न इसका आदि है न अन्त। आत्मा का तो न जन्म होता है न मृत्यु, फिर मौत किसकी होगी ? अध्यात्मवाद की इतनी ऊँची उड़ान न ले सके, मानव-जन्म को आत्मा का ही जन्म मानता हो तो जिसका जन्म हुआ है, उसे मौत अवश्य आनी है। होनी अनहोनी नहीं हो सकती। फिर मौत का शोक किसलिए ? ज्ञान के मार्ग में तो किसी भी दृष्टि से सोचो, शोक का कोई स्थान नहीं। रहा कर्म का रास्ता, वह भी स्पष्ट है। तू क्षत्रिय है। क्षत्रिय का कर्म है धर्म-युद्ध में प्राण लेना और प्राण देना। रण-भूमि ही क्षत्रिय का स्वर्ग है। फिर इससे हटना काहे को? रहा यह सन्देह कि हमारी विजय हो या उनकी, किसी की भी विजय हो। असंख्य विधवाएँ, असंख्य अनाथ, सन्तान-हीन

www.thearyasamaj.org

वृद्ध, असंख्य आचार-भ्रष्ट कुल और कुलांगनाएँ-एक शब्द में सारी जाति-की-जाति धर्म-कर्म-रहित हो जाएगी। यह अनाधिकार चिन्ता है। मनुष्य का अधिकार है-कर्म कर दे। फल का निर्धारण उसके हाथ में नहीं। मनुष्य को कर्म करना ही फल की कामना से रहित होकर चाहिए। वास्तव में निष्काम कर्म ही सच्चा ज्ञान है, और ज्ञानपूर्वक क्रिया ही उत्तम क्रिया है। इस स्थान पर आकर ज्ञान और कर्म एक हो गए हैं। जब तक कर्म स्वार्थ-सिद्धि के लिए किया जाता है, तब तक वह बन्धन का, हृदय के संकोच का, दीनता अर्थात् दासता का हेतु रहता है। वही कर्म स्वार्थ के स्थान में यज्ञार्थ करो। उसका स्वरूप ही बदल जाता है। अब उसी कर्म से बन्धन नहीं स्वाधीनता, हृदय का संकोच नहीं फैलाव, दासता नहीं स्वाधीनता, स्वामित्व का भाव निष्पन्न हो जाता है। फल की मोहताजी ही मोहताजी है, और फल से बेपरवाही तो फिर बादशाही है। यज्ञ का अर्थ है-समष्टि के लिए कर्म करना। जिस संसार की मिट्टी से हमारा शरीर बना है, उसी के भले के लिए इस शरीर को लगा देना। ऐसा कर्म करने से मनुष्य एक-साथ संन्यासी (त्यागी) भी रहता है, योगी (कर्म-मार्ग का राही) भी। भीख माँगना ही संन्यास नहीं। तू क्षत्रिय है। तेरी शिक्षा-दीक्षा खून देने और लेने के लिए हुई है। कहलाना राजा, और तलवारों की झंकार सुनाई देने लगे तो गले में कफ़नी डाल देना-यह कौन-सा धर्म है ?

इस उपदेश में जादू था। परन्तु अर्जुन पर आत्मीयता-परकीयता का मोह सवार था। अपनों के विरुद्ध शस्त्र कैसे उठाऊँ ? यह चिन्ता चिता बनी जलाए डालती थी। उसने श्री कृष्ण की तर्कणा को सुना-अनसुना कर दिया। श्री कृष्ण ने देखा, यहाँ यह हथियार बेकार है। उस पर अपने व्यक्तित्व का प्रभाव डालना चाहा। महाभारतकार कहते हैं-उन्होंने अर्जुन को दिव्यचक्षु दिया जिससे वह उनका विश्वरूप देख सके।

अर्जुन ने देखा-कृष्ण का एक मुँह नहीं, अनेक मुँह हैं; एक बाहुं नहीं, अनेक बाहुएँ हैं; अनेक नेत्र हैं; हज़ार सूर्यों की प्रभा एक कृष्ण में है। एक आग है कि आकाश-पाताल में छाई हुई है और उसमें देव-दानव सब प्रवेश कर रहे हैं। कोई डरकर भागा जा रहा है, कोई हाथ जोड़े स्तुति कर रहा है। कराल काल मुँह खोले खड़ा है और मनुष्य, जैसे पतंगे प्रदीप की ज्योति पर, गिर-गिरकर भस्म हुए चले जाते हैं।

अर्जुन डर गया। उसने पूछा-महाराज ! इस भयानक रूप का क्या अभिप्राय है ? कृष्ण ने कहा-"यही कि मैं यम हूँ, लोक का क्षय करना चाहता हूँ। भीष्म, द्रोण आदि योद्धा मैंने तो मार ही दिये हैं। अब तू चाहे लड़ चाहे न लड़, इनका अन्त मेरी युद्ध-बुद्धि ने कर दिया। मुझे अब एक निमित्त-बाहर का साधन चाहिए जो मेरे मानसिक रण-क्षेत्र में हो चुकी घटना को भौतिक जगत् में प्रत्यक्ष कर दे। तेरी इच्छा हो तो तू ही निमित्त बन जा। इससे यश भी होगा, राज्य की प्राप्ति भी होगी। नहीं तो यह काम तो होकर ही रहेगा।"

इसके पश्चात् श्री कृष्ण ने इस भयानक चित्र में सौम्यता का अंश भी प्रविष्ट करा दिया। इस अंश में हर्ष का, अनुराग का प्राबल्य था। राक्षस भाग रहे थे, देवता प्रसन्न हो रहे थे। अर्जुन की जान में जान आई। डरा हुआ तो था ही, पर अब भक्ति भी उमड़ी। कृष्ण को सब ओर से, सब प्रकार से नमस्ते कर जीवन-भर की धृष्टताएँ क्षमा कराईं और कहा-महाराज ! आज्ञाकारी सेवक हूँ।

यह विश्व-रूप क्या था ? 'महाभारत' के शब्दों में 'दिव्यचक्षु' का चमत्कार। कृष्ण ने अर्जुन पर मोहिनी-सी डाल दी। दिव्य चक्षु या मोहिनी मनोवैज्ञानिक वस्तु है। इसकी व्याख्या भी मनोवैज्ञानिक ही होनी चाहिए। अर्जुन अत्यन्त विषाद की अवस्था में था। उसे भीष्म, द्रोण आदि गुरुओं, दुर्योधन आदि बन्धुओं, लक्ष्मण तथा अभिमन्यु आदि पुत्रों की मृत्यु होनी प्रत्यक्ष दीख रही थी। श्री कृष्ण ने सबसे पहले प्रयत्न यह किया कि उसके हृदय में विषाद का विपरीत भाव-योग की परिभाषा में प्रतिपक्ष भावना-उद्बुद्ध की जाए। उन्होंने पहले अपना सारा युक्ति का बल लगाया। उसका यथेष्ट प्रभाव नहीं पड़ा। अब उन्होंने समझ लिया कि अर्जुन का भूत ज्यादा: गहरा, ज्यादा: मार्मिक है ; ऊपर-ऊपर की तर्कणा से उतरने का नहीं। उन्होंने तर्कणा की थाह से कहीं अधिक गहरी चोट करनी चाही। भक्ति का स्थान युक्ति की पहुँच से बहुत दूर है। भक्ति आत्मा का मर्म है। श्री कृष्ण उपदेश करते-करते अपने वैयक्तिक वैभव की महिमा बखानने लगे। उन्होंने कहा-"संसार का आधार मैं हूँ। मेरी एक ही उँगली पर सारा चराचर जगत् नाचता है। कारण कि मैं चराचर का आत्मा हूँ। मेरा जीवन यज्ञ के अर्पण है। मेरी किसी क्रिया में स्वार्थ का अंश नहीं। मैं यज्ञ-रूप हूँ। समष्टि के अर्पण हूँ, अत: समष्टि मेरी है। मैंने सारे लोक को अपना लिया-अपना कर लिया है। अत: सारा लोक मेरे वश में है। मेरे कहे के

www.thearyasamaj.org

बाहर तू कैसे होगा ?'' अर्जुन की समझ में यह बात नहीं आई। हमारे जैसे हाथ-पाँव, हमारे जैसे सिर-पैरवाला, चार-एक हाथ का पुतला कृष्ण सारे जगत् का स्वामी-विश्व का संचालक-कैसे हो सकता है ? श्री कृष्ण ने अर्जुन की आँख से आँख मिलाई। महापुरुषों की आँख की मोहिनी प्रसिद्ध ही है। नैपोलियन की आँख का तेज उसके बड़े-बड़े सेनापतियों के लिए असह्य हो जाता था। वे उसकी आँख से आँख नहीं मिला सकते थे। अर्जुन की आत्मा विषाद से निर्बल, अत: मोहिनी प्रभाव की पात्र-हो ही चुकी थी, श्री कृष्ण के उपदेश ने उसके अन्त:करण में गुह्य भावनाओं की एक परोक्ष हलचल-सी मचा दी थी। जब श्री कृष्ण ने अपनी अलौकिक शक्तियों का वर्णन प्रारम्भ किया तो उसकी बुद्धि स्तब्ध-सी हो गई। उसने सोचना छोड़ दिया। मोहिनी के प्रभाव का यही अवसर होता है। कृष्ण ने अपने कराल संकल्प को अपनी दृष्टि में केन्द्रित कर दिया। अर्जुन ने रणांगण में आते ही एक महान् श्मशान का चित्र तो अपनी आँखों के सामने फिरता देख ही लिया था। कृष्ण के अदम्य संकल्प ने उसी बीभत्स नाट्य का सूत्रधार स्वयं कृष्ण को बना अर्जुन की विषादापन्न कल्पना के चित्र का रंग और गहरा कर दिया। संसार के रंगमंच पर जितनी भी महत्त्वपूर्ण लीलाएँ हुई हैं, उनके सूत्रधार अनेक-मुख, अनेक-बाहु, अनेकोरु, अनेक-नेत्र रहे ही हैं। जब तक वे उस लीला में लगे रहते हैं, तब तक सारे संसार की जिह्वाएँ उन्हीं को दुहराती हैं, मानो वे जिह्वाएँ उन्हीं की हो गई हैं। जन-साधारण की एक बहुत बड़ी संख्या अपना बाहु-बल उनके अर्पण कर देती है। भक्त-जनों के नेत्र उन्हीं के नेत्रों से संसार के सभी दृश्यों को देखते हैं। यज्ञार्थ जीनेवाले-राष्ट्रों के निरहंकार कर्णधार-वास्तव में विश्व-रूप होते हैं। उन्होंने युद्ध का संकल्प कर लिया। फिर किसकी शक्ति है कि उससे बचे! जाति पर जाति, राष्ट्र पर राष्ट्र देखते-भालते, न इच्छा होते हुए भी, मृत्यु के मुख में सहसा प्रविष्ट हुए जाते हैं। वे कर्णधार उस समय सचमुच कराल काल बन जाते हैं। अर्जुन के सामने कृष्ण का वही रूप आया। कृष्ण का दृढ़ विश्वव्यापी संकल्प, जिसके अवश्यम्भावी प्रभाव से भारत का कोई राष्ट्र बच नहीं सका, घनीभूत हो अर्जुन पर उस समय पड़ा था, वही आज पाठक के भावाविष्ट हृदय पर भी पड़ता है। वह कृष्ण के आगे वैसा ही विनम्र होकर झुक जाता है जैसा अर्जुन उस समय झुका था।

श्री कृष्ण का दृढ़ संकल्प पाण्डवों के वनवास के समय से लेकर युद्ध की समाप्ति तक 'महाभारत' के एक-एक पन्ने पर चित्रित है। युधिष्ठिर के राजपाट छोड़ जंगल जाने की तैयारी के समय जब द्रौपदी ने इनसे द्यूत का अमंगल समाचार कहा और अपने व्यथित हृदय को रो-रोकर इनके सम्मुख आँसुओं के रूप में पुञ्जीभूत कर दिया, तो इन्होंने सांत्वना देते हुए कहा-''भद्रे ! आज तू रोती है, कल कौरवों की स्त्रियाँ अर्जुन के तीरों से जलते हुए पतियों को रोएँगी।'' विराट् की सभा में जब द्रुपद ने सन्धि के प्रस्ताव के साथ-साथ युद्ध के भी पूरे उद्योग की मन्त्रणा दी, तो इन्होंने इस विचार से सहमति प्रकट की और इस महान् उद्योग का कार्य द्रुपद के ही कंधों पर डाला। जब स्वयं दूत बनकर कौरवों की सभा में जाने लगे तो एक बार फिर द्रौपदी ने मर्म-भेदी शब्दों में पाण्डवों को युद्ध के लिए उकसाया। उसने अपने सुन्दर साँपों की तरह लहराते बालों को बाएँ हाथ से पकड़कर आँखों से आँसुओं की लड़ी गिराते हुए कहा-''यही वे बाल हैं जिन्हें दु:शासन के अश्लील हाथों ने भरी सभा में खींचा था। सखे ! कृष्ण ! जहाँ-जहाँ सन्धि का विचार सुनना, इन बालों को स्मरण कर लेना। यदि भीम और अर्जुन इतने क्षुद्र हो गए हैं कि इन्हें सन्धि के बिना चैन नहीं पड़ता, तो मेरा बूढ़ा बाप अपने वीर पुत्रों की सहायता से अपनी अभागी पुत्री का बदला लेगा।'' श्री कृष्ण ने इस समय भी वही उत्तर दिया जो इससे पूर्व दे चुके थे। उन्होंने कहा-''तू बहुत जल्दी कौरवों की स्त्रियों को रोती देखेगी। उनके सगे-सम्बन्धी मर जाएँगे और वे अनाथा होंगी। धृतराष्ट्र के पुत्रों का काल आ गया है। यदि उन्होंने मेरी न सुनी तो वे अवश्य भूमिशायी होंगे। उन्हें कुत्ते और श्रृगाल नोच-नोचकर खाएँगे। हिमालय अपने स्थान से हिले तो हिल जाए, पृथिवी टुकड़े-टुकड़े हो जाए तो हो जाए, तारे नीचे आ पड़ें तो आ पड़ें, मेरा कहा असत्य सिद्ध न होगा। कृष्णे ! यह मेरी प्रतिज्ञा है। तू रोना बन्द कर !''

हस्तिनापुर में पृथा के विलाप का उत्तर देते हुए श्री कृष्ण ने इसी भाव का प्रकाश किया था। बात यह है कि श्री कृष्ण दुर्योधन की हठीली प्रकृति को जानते थे। उन्हें पूरा निश्चय था कि वह साम, दाम, और भेद इन तीनों उपायों से मानेगा नहीं। उसका इलाज एक ही था-दण्ड। द्रुपद, सात्यकि, विदुर, द्रौपदी सबने यह बात कह डाली। श्री कृष्ण ने कही नहीं, ध्यान में रखी। मनुष्य आशा के विपरीत भी आशा करता है। इनकी हार्दिक इच्छा थी कि सन्धि हो जाय; वृथा लोक-क्षय

www.thearyasamaj.org

न हो; परन्तु अनुमान यही था कि सन्धि न होगी। हृदय एक बात के लिए प्रयत्न कर रहा था, मस्तिष्क दूसरी सम्भावना को उपस्थित किये देता था। अपने उपदेशानुसार इन्होंने फल की चिन्ता न कर सन्धि के लिए भरसक प्रयत्न किया। जब वह असफल हुआ तो कर्तव्य का मार्ग साधा-पूरे बल से युद्ध करना। इनके जीवन का लक्ष्य था सम्पूर्ण भारत को एक, बलात्काराश्रित नहीं, प्रीत्याश्रित साम्राज्य की छत्र-छाया में एकीभूत कर देना। ये इस लक्ष्य से रत्ती-भर इधर-उधर न हो सकते थे। अर्जुन आदि इस लक्ष्य की प्राप्ति के साधना-मात्र थे। दुर्योधन अपने मंत्रिमण्डल-सहित इस साम्राज्य के रास्ते में कण्टक था। उसे और उस-जैसे सबको ये अपने संकल्प में अपने रास्ते से हटा चुके थे। गीता का विश्वरूप इसी विशाल संकल्प का दिग्दर्शन था। अर्जुन की समझ में घटना-चक्र की पेचीदगी-इस समय तक की सारी उलझन-आ गई। उसने जान लिया कि अब लड़ने के सिवाय रास्ता ही नहीं। वह चक्रधर के चक्र पर बैठ गया। उसने गाण्डीव उठा लिया और सरल-स्वभाव बच्चे की तरह लड़ाई के मैदान में कूद पड़ा। लड़ते-लड़ते उसके हृदय में कोमल और कठोर भावनाओं के अनेक उतार-चढ़ाव हुए। विपरीत भावनाओं के वे विप्लव कैसे उठे, कैसे बैठे, यह कथा आने वाले प्रकरणों में वर्णित होगी। अर्जुन का सारथि बनकर श्री कृष्ण ने कैसे अपने लिए उपयुक्ततम स्थान का चुनाव किया था, यह कहानी भी उसी वर्णन के अन्तर्गत आएगी।

पृष्ठ 10 का शेष- योगीराज.....

अर्थात् श्री कृष्ण के सिवाय कोई अन्य राजा मुझे ऐसा नहीं दिखता, जो वेद, वेदांग, ज्ञान, बल, पृथ्वीतल पर इनके समान किसी और में नहीं। इनका दान, कौशल, शिक्षा ज्ञान, शक्ति शालीनता, नम्रता धैर्य और सन्तोष अतुलनीय है ये ऋत्विज्ञ है, गुरु है, स्नातक है और लोकप्रिय राजा है ये सब गुण इस एक पुरुष में मानो मूर्त्त हो गए है इसलिए इन्हें अर्घ्य देना उचित है। ऐसे महान भगवान श्री कृष्ण जी को अपने मन में चरित्र नायक के रूप में रख कर हे आर्यों अपना जीवन बनाओं अन्यों की तरह दोष उस भगवान पर मत लगाओ । विषय के अधिक हो जाने के कारण श्री कृष्ण जी के जीवन के बहुत से पहलू रह गए है अत: महाभारत व गीता का अवलोकन करके पढ़े और श्री कृष्ण जी का जन्म धूमधाम से मनाकर अपने आर्यत्व का परिचय दे।

आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर का वेद सप्ताह सम्पन्न

आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर का वेद सप्ताह सम्पन्न (श्रावणी उपाकर्म) 5 अगस्त 2013 से 11 अगस्त 2013 तक बड़ी धूमधाम से मनाया गया। प्रतिदिन प्रात: हवन यज्ञ तथा सायंकाल को भजन व उपदेश होते रहे। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य राजू जी वैज्ञानिक थे जिन्होंने वेद मन्त्रों की सरल रूप में व्याख्या करके लोगों को वेद मार्ग पर चलने का संदेश दिया। श्री राजेश प्रेमी जी ने अपने मधुर भजनों से लोगों को भावाभिवोर कर दिया।

11 अगस्त 2013 को मुख्य समारोह यज्ञ की पूर्णाहुति के साथ सम्पन्न हुआ। कई याज्ञिक परिवारों ने परिवार सहित यजमान बन कर स्वस्ति याग के मन्त्रों का पाठ करते हुए यज्ञ को सम्पन्न किया। आचार्य राजू जी वैज्ञानिक जी ने बीच-बीच में मन्त्रों की व्याख्या करके यज्ञ के महत्त्व को बताया। पूर्णाहुति के पश्चात मुख्य कार्यक्रम आरम्भ हुआ। सर्वप्रथम श्री अनिल गुप्ता जी ने प्रभु भक्ति का बहुत सुन्दर भजन सुनाया। इसके पश्चात् स्वामी श्री राम मुनि जी ने बहुत सुन्दर भजन सुनाकर सबको आनन्दित कर दिया। भजनों के पश्चात् आचार्य देवराज़ जी का प्रवचन हुआ जिसमें उन्होंने वेदों के महत्त्व के बारे में लोगों को बताया कि वेद हमारी संस्कृति का आधार हैं। वेदों की शिक्षा को अपनाकर संसार से मत-मतान्तर खत्म हो सकते हैं। श्री राजेश प्रेमी जी ने प्रभु भक्ति तथा आर्य समाज से सम्बन्धित भजन सुनाकर लोगों का खूब मनोरंजन किया। इसके पश्चात् आर्य प्रतिनिधि सभा कार्यालय से आए श्री सुरेश शास्त्री जी का प्रवचन हुआ जिसमें उन्होंने श्रावणी पर्व के महत्त्व के बारे में लोगों को बताया कि पर्व हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। श्रावणी के इस पावन पर्व पर हम स्वाध्याय का व्रत लें और अज्ञान को दूर करें तभी हमारा श्रावणी पर्व का मनाना सार्थक होगा। इसके पश्चात् आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य राजू जी वैज्ञानिक का बहुत ही सारगर्भित प्रवचन हुआ। उन्होंने कहा कि हम स्वाध्याय के द्वारा अपने अज्ञान को दूर करें और नित्य प्रति वेद के पवित्र मन्त्रों को स्वाध्याय करते हुए हम अपने अन्दर की पाशविक प्रवृत्तियों को दूर करें। मनुष्य बुरे कर्म अज्ञान के कारण करता है। अत: स्वाध्याय के द्वारा हम अपने अज्ञान को दूर करके सुखी जीवन बिता सकते हैं। अंत में आर्य समाज के प्रधान श्री सोहन लाल जी सेठ ने सबका धन्यवाद किया और कहा कि यह सारा कार्यक्रम आर्य समाज के प्रधान श्री ओम प्रकाश जी अरोड़ा को समर्पित है जिन्होंने इस उत्सव से कुछ दिन पूर्व अपने नश्वर शरीर को छोड़कर परमात्मा के चरणों में आश्रय प्राप्त किया है। कार्यक्रम का संचालन स्कूल के प्रिंसीपल एस. के. भारद्वाज जी ने किया। शांतिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन किया गया। इस कार्यक्रम को सफल बनाने में आर्य समाज के सभी अधिकारियों तथा सदस्यों ने पूरा सहयोग दिया।

-रमेश कालड़ा महामन्त्री आर्य समाज

www.thearyasamaj.org

योगीराज श्री कृष्ण जी

श्री कृष्ण जी यदुवंशी थे। यदुवंश में एक राजा मधु भी हुए हैं जिनके कारण यदुवंशी मधु व माधव भी कहलाने लगे। यादव और माधव एक ही वंश के दो नाम है। यदु राजाओं में भी दो उपंश हुए वृष्णि और भोज। श्रीकृष्ण जी वृष्णि वंश में पैदा हुए इसलिए उन्हें वार्ष्णाय भी कहा जाता है। श्री कृष्ण के दादा का नाम शूर था। शूर का बड़ा लड़का वासुदेव था। वासुदेव के पुत्र श्री कृष्ण जी थे। भोज वंश के भी दो उपभेद हो गए-एक कुकुर और दूसरे अन्धक। श्री कृष्ण की माता देवकी कुकुर वंश की थी। यादव वंश का राज्य उस समय कुकुर राजाओं के हाथ में था। माता देवकी के पिता का नाम देवक था और देवक के भाई उग्रसेन यादवों की राजधानी मथुरा के राजा थे। राजा उग्रसेन के पुत्र का नाम कंस था जो बाल्यकाल से ही महत्त्वाकांक्षी और उदण्ड था। वह बड़ा होकर इतना अहंकारी हो गया कि वह अपने पिता उग्रसेन की बात भी नहीं मानता था। उसके मन में राजा बनने की लालसा पैदा हो गई परन्तु अपने पिता के राजगद्दी पर बैठे होने के कारण वह राजा नहीं बन सकता था। उसने धीरे धीरे सेना में भी अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया और राजदरबारियों में अपना स्थान बना लिया। राजकुमार होने के नाते जब सभी उसको सहयोग देने लगे तो उसने अपने पिता के वचनों की अवहेलना आरम्भ कर दी और मनमानी करने लगा। जब पिता ने उसे ऐसा करने से रोका तो उसने अपने पिता को जेल में डाल दिया और स्वयं मथुरा का राजा बन बैठा। चाटुकार दरबारियों और उसके श्वसुर जरासन्ध ने भी इसमें कंस का साथ दिया, इससे वह और भी अभिमानी हो गया।

महाभारत की यह पहली घटना थी जिसमें पुत्र ने अपने स्वार्थ के लिए अपने धर्मात्मा पिता को जेल में डाल दिया और सारा राज-पाट अपने हाथ में ले लिया। यह भारतीय संस्कृति पर एक बहुत बड़ा काला धब्बा था और भारत के पतन का आरम्भ था।

दूसरी तरफ हम देखते हैं कि श्री कृष्ण जिस वृष्णियों के वंश में पैदा हुए उसमें कुल परम्पराओं का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता था। महाभारत में कई स्थानों पर इस कुल की विशेषताओं का वर्णन मिलता है। श्री कृष्ण वंशी सदा अपने वृद्धों की आज्ञाओं का पालन करते थे और अपने कुल की मर्यादाओं का सदा ध्यान रखते थे। धनवान होकर भी यह अभिमान रहित और आत्म श्लाघा से दूर रहते हुए कार्य करने में विश्वास रखते थे। वह संयमी और बहुत धार्मिक थे। श्री कृष्ण का जन्म ऐसे धार्मिक खानदान में आज से लगभग साढ़े पाँच हज़ार वर्ष पूर्व हुआ।

कहा जाता है कि जब वासुदेव और देवकी का विवाह हुआ और जब वह विवाह के पश्चात् वापिस लौट रहे थे तो देवकी का चचेरा भाई कंस प्रेमवश स्वयं उनका रथ चला रहा था। दैवयोग से उस समय एक आकाशवाणी हुई कि हे मूर्ख कंस तू जिसे इस रथ में बैठा कर ले जा रहा है तेरी इस चचेरी बहिन के गर्भ से उत्पन्न आठवाँ पुत्र तेरा नाश करेगा। कंस इस आकाश वाणी से चिन्तित हो उठा और उसने निश्चय किया कि मैं देवकी को समाप्त कर दूं परन्तु वह जानता था कि यदि उसने ऐसा किया तो सारा राज्य उसके विरुद्ध बगावत पर उतर आएगा। इसलिए उसने वासुदेव और देवकी को बन्धक बना लिया और अपने पिता उग्रसेन की तरह नज़रबन्द कर दिया। इस घटना में कितनी सच्चाई हो सकती है, यह प्रबुद्ध लोग जानते हैं आकाशवाणियां क्या होती हैं, यह भी सब लोग जानते हैं। परन्तु ज़रूर कुछ हुआ होगा। उसका यह भी कारण हो सकता है कि देवकी और वासुदेव दोनों ही कंस को यह बात समझाते थे कि उसने अपने पिता उग्रसेन को जेल में डालकर अच्छा कार्य नहीं किया, उसे बन्धन मुक्त कर दिया जाए। उसे यह भी लगता था कि यदि वासुदेव और देवकी मेरे द्वारा किए जा रहे अत्याचारों के विरुद्ध खड़े हो गए तो मेरा राज्य मुश्किल में पड़ जाएगा। इसलिए उसने एक षड्यन्त्र के तहत वासुदेव और देवकी दोनों को नज़रबन्द कर दिया। वह यह भी नहीं चाहता था कि इनका वंश बढ़े, क्योंकि यह दोनों तो धर्मात्मा प्रवृत्ति के हैं। यह तो मुझे कोई दुख न भी पहुंचाएं परन्तु इनकी सन्तानें मेरा नाश अवश्य

www.thearyasamaj.org

करेंगी क्योंकि मैंने बिना किसी अपराध इनके माता-पिता को जेल डाल दिया है। इसलिए वह इन दोनों के बच्चों को पैदा होते ही मार डालता था ताकि ना रहे बांस न बजे बांसुरी।

मथुरा नगर के प्रबुद्ध व धार्मिक प्रवृत्ति के लोग कंस के इसलिए विरोधी हो गये थे क्योंकि वह अपने पिता उग्रसेन और अपनी बहन देवकी व बहनोई वासुदेव पर कई प्रकार के अत्याचार कर रहा था। सारी जनता की सहानुभूति वासुदेव और देवकी के साथ जुड़ गई थी। सात बच्चों को पैदा होते ही कंस ने मार डाला। इसलिए निश्चय हुआ कि अब आठवीं सन्तान की रक्षा की जाए। वासुदेव ने अपने मित्र नन्द से इस सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया कि क्यों न हम दोनों एक ही समय में विधिवत गृहस्थ आश्रम का पालन कर सन्तान पैदा करें ताकि मेरे आठवें बच्चे को बचाया जा सके और विचार विमर्श के पश्चात् ऐसा ही किया गया।

भाद्रपद की अष्टमी को मथुरा की जेल में रात्रि बारह बजे श्री कृष्ण जी का जन्म हुआ। कहा जाता है कि श्री कृष्ण के जन्म होते ही वहां नियुक्त पहरेदार सो गए। जेल के दरवाज़े स्वयंमेव खुल गए। वासुदेव श्री कृष्ण को एक कपड़े में लपेट कर एक टोकरे में डाल कर जेल से बाहर निकले और रातों-रात यमुना नदी को पार करके अपने मित्र नन्द को श्री कृष्ण को सौंप कर उसकी एक नवजात लड़की को लेकर प्रात: होने से पूर्व ही वापिस जेल में आ जाए।

हमारे देश में चमत्कारों का बाहुल्य सदा रहा है। यह एक चमत्कार सिद्ध कर दिया गया। परन्तु सच्चाई यह है कि जेल के सभी अधिकारी व द्वारपाल आदि कंस के अत्याचारों से दु:खी थे क्योंकि उसने अपनी बहन देवकी के सात पुत्रों को उनकी आँखों के सामने मौत के घाट उतारा था। इसलिए इस आठवें बच्चे को बचाने के लिए इस कार्य में सभी ने सहयोग दिया क्योंकि यदि पहरेदार तो सो गए थे, वासुदेव श्री कृष्ण को किसी तरह जेल से बाहर भी ले आए थे, परन्तु गोकुल तक वासुदेव ने किस तरह श्री कृष्ण को पहुंचाया। यमुना नदी में बाढ़ आई हुई थी। भाद्रपद वर्षा का महीना है। वासुदेव वर्षा में बिना किसी साधन के यमुना तक कैसे पहुंचे। यमुना से पार कैसे गोकुल में गए। फ़िर तुरन्त ही वहां से नन्द की नवजात लड़की को लेकर रातों-रात कैसे जेल में वापिस पहुंचे। यदि हम वासुदेव के गोकुल में आने जाने वाली घटना को भी भूल जाएं तो यह कैसे हुआ कि वासुदेव को नन्द के घर में से वापिस लाने के लिए नवजात लड़की मिल गई।

कपोल कल्पित बातों को छोड़ यदि गम्भीरता से विचार किय जाए तो पता चलता है कि यह एक योजनाबद्ध कार्य किया गया। वासुदेव को मथुरा की जेल से रात्रि के अन्धेरे में किसी विशेष वाहन द्वारा यमुना तक लाया गया और यमुना पार करने के लिए नाव आदि का प्रबन्ध किया गया, फिर यमुना नदी के दूसरे किनारे पर भी वाहन का प्रबन्ध गोकुल तक पहुंचने के लिए किया गया। नन्द और वासुदेव दोनों ही धर्मात्मा और संयमी व्यक्ति थे। दोनों ने सन्तान प्राप्ति के लिए योजनाबद्ध तरीके से कार्य किया तब जाकर ऐसा हुआ। वासुदेव द्वारा लड़की को लेकर वापिस जेल में आ जाने तक की सारी व्यवस्था सुनियोजित थी। यदि ऐसा न होता तो कोई गुप्तचर रात को श्री कृष्ण को ले जाते हुए देख कर उसी समय कंस को बता देता और कंस श्री कृष्ण का उसी समय वध कर देता। हम चमत्कारों से बाहर आकर सारे घटना चक्कर को समझने का प्रयास करें तो सारी सच्चाई सामने आ जाएगी।

कई लोग ऐसा कहते हैं कि श्री कृष्ण तो भगवान थे और कंस को मारने के लिए उन्होंने अवतार लिया था। विचारणीय बात यह है कि यदि परमात्मा ने किसी दुष्ट व्यक्ति को मारना है तो उसे मारने के लिए वह मानव का अवतार लें, यह बात बुद्धि मानने के लिए तैयार नहीं होती। परमात्मा क्या सभी दुष्टों को मारने के लिए अवतार लेता है। यदि ऐसा है, आज तो कंस से भी अधिक अत्याचारी लोग संसार में विद्यमान हैं जो सत्ता प्राप्त करने के लिए अपनों का खून कर रहे हैं, उन्हें सता रहे हैं। निर्दोष लोगों का खून बहा रहे हैं जो सिर से पांव तक पाप में डूबे हुए हैं, परन्तु आज तो भगवान उनका नाश करने के लिए अवतार नहीं लेता। पहले तो एक कंस था परन्तु आज तो चप्पे-चप्पे पर कंस मिल जाएंगे।

यह कहा जा सकता है कि एक धर्मात्मा माता-पिता के यहां एक महान् आत्मा ने शरीर धारण करके जन्म लिया। अवतरण तो सभी आत्माओं का होता है। प्रत्येक आत्मा कहीं न कहीं से तो माँ के गर्भ में परमात्मा की व्यवस्था में बन्ध कर आती है। इसी प्रकार श्री कृष्ण जी का भी अवतरण हुआ और परमात्मा ने इस महान् आत्मा की रक्षा के लिए सारी व्यवस्था बनवा दी। इस प्रकार श्री कृष्ण पर परमात्मा की विशेष कृपा रही। श्री कृष्ण को जीवित रखने में जहां जेल के

www.thearyasamaj.org

अधिकारियों का सहयोग रहा वहां नन्द और यशोधा का सबसे ज्यादा सहयोग रहा जिन्होंने उसे बचाने के लिए अपनी नवजात बेटी का बलिदान दे दिया। क्योंकि प्रात: काल ही भाद्रपद की नवमी को कंस को सूचना दे दी गई कि देवकी को इस बार पुत्री पैदा हुई है। उस दुष्ट ने उस नन्हीं सी नवजात पुत्री पर भी दया नहीं की और पूर्व बच्चों की भान्ति उसकी भी हत्या कर दी। यहां यह किंवदन्ति है कि जब उस लड़की को कंस ने मारने के लिए पत्थर पर पटका तो वह पत्थर पर लगने के पश्चात् कड़क कर आकाश में पहुंच गई और बादलों की गड़गड़ाहट में बिजली की तरह चमकती हुई ने कहा-पापी कंस तेरा नाश करने वाला पैदा हो गया है।

इस घटना में भी कोई सच्चाई दिखाई नहीं पड़ती। ऐसा होना सृष्टि नियम के विरुद्ध है। हां वहां-उपस्थित लोगों ने जब निर्दयी कंस को उस नवजात व निर्दोष बच्ची को मारते देखा होगा तो उन्होंने जिनको इस बात का पता था कि देवकी की आठवीं सन्तान बचा ली गई है। उन्होंने ज़रूर अपने मन में यह कहा होगा कि दुष्ट कंस तू जिस बच्ची को मार रहा है इसने अपना बलिदान देकर तेरे मारने वाले को बचा लिया है। हो सकता है किसी गुप्तचर ने कंस को यह सूचना दे दी हो कि बच्चा बदल दिया गया है। फिर कंस को शक भी हो सकता है कि पहले तो सात लड़के ही हुए यह आठवां बच्चा लड़की कैसे पैदा हो गई। कंस को भी कुछ सन्देह हो गया और उसने अपने गुप्तचरों से इसकी पड़ताल करवाई परन्तु फिर भी उसे यह जानकारी नहीं मिली कि देवकी का यदि आठवां बच्चा किसी ने बचा लिया हो और उसके स्थान पर अपनी लड़की दे दी हो वह कहां हो सकता है।

इसलिए कंस ने यह भी योजना बनाई कि भाद्रपद की अष्टमी के आस-पास पैदा हुए बच्चों का पता लगाया जाए और यदि यह पता चल जाए यह बच्चा वासुदेव का है तो उसे मार दिया जाए। इसके लिए उसने अपनी महिला गुप्तचर पूतना की ड्यूटी लगाई कि गोकुल में वासुदेव के कई मित्र रहते हैं जिनमें नन्द जी विशेष मित्र हैं। तुम गोकुल जाकर इस बात का पता लगाओ कि वहां इन दिनों में कोई बच्चा तो पैदा नहीं हुआ। यदि हुआ है तो किसी तरीके से उसे समाप्त कर आओ। कहते हैं पूतना भेष बदल कर सुन्दर रूप धारण करके अलंकृत होकर गोकुल में घर-घर गई। पूतना ने गोकुल में जाकर जब नन्द के घर में प्रवेश किया तो उसने एक तेजस्वी बालक को पालने में खेलता हुआ पाया। कहते हैं पूतना ने अपनी दूधियों पर विष लगाया हुआ था और वह दूध पिलाने के बहाने से बच्चे को मारना चाहती थी परन्तु श्री कृष्ण जी सब कुछ जानते थे इसलिए उसने उसके स्तन को इतने ज़ोर से दबाया कि उसका खून बह उठा और वह वहीं मर गई। यदि ऐसी कोई घटना घटी होती तो इससे तो और स्पष्ट हो जाता कि यही वह होनहार बालक है जिसकी कंस को तलाश है और कंस बलपूर्वक उस बालक का वध कर देता परन्तु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। हो सकता है पूतना ज्यों ही श्री कृष्ण को दूध पिलाना चाहती हो उसी समय उसको किसी विषैले सर्प आदि ने काट लिया हो क्योंकि जिस बच्चे की या व्यक्ति की परमात्मा रक्षा करना चाहता है अक्सर देखा जाता है कई बार ऐसी घटनाएं घट जाती हैं और परमात्मा उसकी रक्षा करता है। कुछ भी हो, पूतना की मृत्यु का समाचार जब कंस को मिला तो उसने फिर इस दिशा में कोई कार्य नहीं किया। बालक कृष्ण, गो पालकों के साथ गोकुल में रहता हुआ चन्द्र कला के समान बढ़ने लगा।

उस काल में हमारे देश में प्रत्येक गांव के प्रत्येक घर में सैकड़ों गऊएं होती थी। नन्द के पास तो एक हज़ार गऊएं थी। श्रीकृष्ण को जब गाय का घी, मक्खन, मलाई खाने को और दूध पीने को मिला तो यह बालक अत्यन्त बुद्धिमान और बलवान बनने लगा। वासुदेव की एक दूसरी पत्नी का वर्णन भी मिलता है जिसका नाम रोहिणी बताया जाता है। वह भी गोकुल में रहती थी क्योंकि जेल से बाहर न जाने की पाबन्दी केवल देवकी पर थी। वासुदेव जेल से अन्दर बाहर जा सकते थे। अपने सम्बन्धियों से मिल सकते थे। इस प्रकार रोहिणी का भी एक सुपुत्र था, जिसका नाम बलराम था और वह भी गोकुल में ही पल रहा था। दोनों बच्चे-बड़े तेजस्वी थे, बहुत बलवान बलिष्ठ थे। यहां इस बात का भी पता चलता है कि जब श्रीकृष्ण बच्चा ही था एक दिन यशोधा उसे एक खड़ी हुई लकड़ी की गाड़ी के नीचे ही सुला गई जिस पर दूध, घी, मक्खन लदा हुआ था। श्री कृष्ण की आंख खुली और उसने जब अपने पैरों को इधर-उधर घुमाया तो उसका पैर छकड़े पर पड़ गया छकड़ा गिर गया और दही, दूध, मक्खन आदि चारों ओर बिखर गया। कहा जाता है कि उस छकड़े पर संकटासुर नामक राक्षस बैठा था जो मर गया। ऐसी घटना हो सकती है कि किसी सहारे से खड़ा (शटक) छकड़ा श्री

www.thearyasamaj.org

कृष्ण का पैर लगने पर उल्ट गया हो क्योंकि बच्चे कई बार जब ज़ोर से पैर मारते हैं तो किसी सहारे से खड़ी वस्तु गिर भी सकती है परन्तु उस शटक में बैठा कोई राक्षस मर गया हो यह अतिश्योक्ति दिखाई पड़ती है। महाभारत के सभा पर्व में भी शिशुपाल श्री कृष्ण के सम्बन्ध में बोलते हुए कहता है :-

चेतना रहितं काष्ठं यद्यनेन निपातितम्।
पादेन शकटं भीष्म तत्र किं कृतमद्‌भुतम्।।

कि यदि श्री कृष्ण ने बाल्यकाल में अचेतन अर्थात् खड़ी हुई लकड़ी की गाड़ी को पैर से गिरा दिया हो तो यह कोई विचित्र बात नहीं हुई अर्थात् यह तो साधारण बात है। इस प्रकार शकट वाली घटना हो सकती है, अवश्य हुई हो। जो उस समय प्रसिद्ध हो गई हो, जिसका वर्णन महाभारत में पाण्डवों के यज्ञ के समय भी किया।

श्री कृष्ण की बाल्यकाल की कई मनघड़न्त घटनाएं सुनने को मिलती हैं कि कंस ने श्री कृष्ण जी को मारने के लिए कई षड्यन्त्र रचे। गोकुल (वृन्दावन) में रहते हुए श्रीकृष्ण ने कई राक्षसों को मारा जिनमें वृषासुर, बकासुर, अघासुर का भी गोकुल वासियों की रक्षा के लिए वध किया। ग्वालों की रक्षा के लिए उन्होंने जंगली, पागल बैल अरिष्ट और जंगली उत्पाती घोड़े केशी, उत्पाती जंगली गधे और भयंकर सर्प कालिया दमन को भी मार डाला। क्योंकि यह दुष्ट पशु जंगल में गऊएं चराने वाले ग्वालों को परेशान करते थे। इन सब कारनामों से श्री कृष्ण गोकुल-वृन्दावन में बहुत प्रसिद्ध हो गए थे।

गोप गण प्रतिवर्ष वर्षा के लिए एक विशेष यज्ञ करते थे ताकि कृषि का उत्पादन बढ़े। जब इस यज्ञ का अवसर आया तो श्री कृष्ण ने कहा हमारी जीविका का आधार यह गऊएं हैं। गोवर्धन पर्वत की हरी-हरी घास खाकर यह पर्याप्त दूध देती हैं। इसलिए इस बार यह यज्ञ गोवर्धन पर्वत पर किया जाए और विशाल क्रीड़ा उत्सव भी वहीं किया जाए। प्रीति भोज आदि का आयोजन भी वहीं किया जाए। ग्वालों ने श्री कृष्ण की बात मान ली और पहले गोवर्धन पर्वत को हिंसक जानवरों से रहित किया गया। उन्हें वहां से भगा दिया गया। श्री कृष्ण ने अपने नौजवान साथियों को साथ लेकर वहां वृक्षों आदि को काट कर यज्ञ का स्थान बनाया। वृष्टि यज्ञ अर्थात् जिसे इन्द्र यज्ञ भी कहा जाता था, वह वृष्टि यज्ञ आरम्भ हुआ। उस यज्ञ के ऋत्विक भी श्रीकृष्ण को बनाया गया। गायों और बच्छड़ों को खूब सजाया गया। सभी ग्वालों ने इसमें बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इस यज्ञ के अवसर पर सात दिन तक इतनी वर्षा हुई कि नदी नाले सब चढ़ आए। चारों तरफ पानी ही पानी दिखाई देने लगा। यमुना में इतनी अधिक बाढ़ आई कि यमुना के किनारे बसे सभी गांव जल मग्न हो गए। श्री कृष्ण जी अपनी बाल सेना के सहयोग से सब लोगों को गोवर्धन पर्वत पर ले आए। सब के वहीं ठहरने तथा भोजन आदि की व्यवस्था की। जितने लोग गोवर्धन पर्वत पर आ गए थे उनका कोई बाल बांका नहीं हुआ। गोवर्धन पर्वत पर आए लोगों की रक्षा में श्री कृष्ण जी अपनी बाल सेना सहित डटे रहे। इसी को आगे चल कर कहा जाने लगा कि लोगों को वर्षा व बाढ़ से बचाने के लिए श्री कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को अपने हाथ पर उठा लिया। वास्तव में श्री कृष्ण जी ने गोवर्धन पर्वत पर सभी ग्वालों को ले जाकर उनकी एक सप्ताह तक रक्षा की। शिशुपाल ने महाभारत के सभा पर्व में इस सम्बन्ध में भी कहा है।

वल्मीकमात्रः सप्ताहं यद्यनेन धृतोडचलः।
तदा गोवर्धनो भीष्म न तच्चित्रं मते मम्।।

अर्थात् दीमक के टीले के समान गोवर्धन पर्वत श्री कृष्ण ने सात दिनों तक सम्भाले रखा। मेरी दृष्टि में इसमें कोई आश्चर्य नहीं। वास्तविकता यही है कि श्री कृष्ण ने अपने प्रयास से गोवर्धन पर्वत पर उन वर्षा के सात दिनों में सबको सुरक्षित रखा और सारी व्यवस्था अपने हाथ में ली।

महाभारत के इस सभा पर्व में श्री कृष्ण की निन्दा में शिशुपाल ने पाण्डवों के राजसूय यज्ञ के अवसर पर बहुत कुछ कहा है जैसा कि कहा जाता है कि श्री कृष्ण गोकुल में गोप गोपियों के साथ रास-लीला रचाते थे, माखन चुराते थे और भी अनेकों काल्पनिक घटनाएं श्री कृष्ण के जीवन के साथ जोड़ी गई। यदि कोई ऐसी घटना हुई होती तो शिशुपाल उसका भी वर्णन किए बिना नहीं रह सकता था। महाभारत में गोपी प्रेम व राधा प्रेम की कोई गन्ध भी नहीं आती। महाभारत का कृष्ण चक्रधर है, गदाधर है, असिधर है परन्तु मुरलीधर का कहीं भी वर्णन नहीं मिलता। यह बातें हमें भागवत पुराण, विष्णु पुराण, हरिवंश पुराण और ब्रह्म वैवर्त पुराण में मिलती है। जिनमें गोपी प्रसंग, रास लीलाएं, चीरहरण आदि काल्पनिक बातें लिखी गई हैं।

गोकुल में रहते हुए श्री कृष्ण जी की जब ख्याति चारों

www.thearyasamaj.org

ओर फैल गई तो कंस को भी श्री कृष्ण जी की शक्ति से डर लगने लगा। उसने अपने गुप्तचरों से जान लिया था कि श्री कृष्ण और बलराम वासुदेव के पुत्र हैं जिनको मैंने अपनी जेल में डाला हुआ है और यह अधिक शक्ति करके कभी भी मथुरा पर चढ़ाई कर सकते हैं इसलिए उसने एक योजना बनाई कि किसी तरह से श्री कृष्ण और बलराम को मथुरा बुलाया जाए और एक षड्यन्त्र रच कर मरवा दिया जाए। क्योंकि उसने जितने भी मायावी व राक्षसी लोग श्री कृष्ण का वध करने के लिए गोकुल में भेजे थे उनमें से कोई भी उसे नहीं मार सका बल्कि वह सब स्वयं मारे गए थे।

कंस ने मथुरा में एक उत्सव का आयोजन किया जिसे धनुष यज्ञ का नाम दिया जिसमें दूर-दूर से पहलवानों को बुलाया गया। इस अवसर उसने अक्रूर को कहा कि इस उत्सव की शोभा तभी बढ़ सकती है यदि श्री कृष्ण और बलराम भी इस उत्सव से भाग लें। इसलिए तुम जाओ, तुम्हारे कहने से वह आ जाऐंगे उन्हें रथ में बैठाकर सादर मथुरा में ले आओ। जब यादव वीर अक्रूर गोकुल पहुंचा और उसने श्री कृष्ण बलराम को इस धनुष यज्ञ में भाग लेने के लिए कहा तो दोनों भाई इसके लिए बड़ी प्रसन्नता से जाने के लिए तैयार हो गए। इसमें एक कारण विशेष यह था कि श्री कृष्ण अत्याचारी कंस का वध करना चाहता था। यादव संघ की पुनः स्थापना करना चाहता था। परन्तु कंस का वध करना आसान न था। एक तो कंस मथुरा का स्वेच्छी राजा था। दूसरे मगध नरेश उस समय के महाबली राजा जरासन्ध का उस पर वरदहस्त था। कंस जरासन्ध का जमाई था उसकी दो पुत्रियां अस्ति और प्राप्ति कंस की पत्नियां थी। दूसरी तरफ यादवों में एकता का अभाव था। इसलिए श्री कृष्ण को भी कंस से मिलने का इससे अच्छा और अवसर मिलने वाला नहीं था। दोनों भाई प्रसन्नता पूर्वक अक्रूर के रथ में बैठकर मथुरा में आ गए। जब यह दोनों धनुष यज्ञशाला में जाने लगे तो एक खूनी हाथी कुवलयापीड़ नाम का इनकी ओर झपटा परन्तु श्री कृष्ण जी और बलराम जी तो पहले से ही सावधान होकर गए थे। उसी समय श्री कृष्ण ने हाथी का दाँत पकड़ कर बड़े ज़ोर से दबाया और उसे समाप्त कर दिया। जब वह आगे बढ़े तो वह देखते हैं वहां चारों ओर बड़े-बड़े पहलवान बैठे हैं और कंस भी एक ऊँचे सिंहासन पर बैठा है। श्री कृष्ण ने धनुष तोड़ कर अपनी वीरता का परिचय दिया। ज्यों ही वह आगे बढ़े कंस का नामी पहलवान चाणूर श्री कृष्ण पर झपटा और मुष्टिक पहलवान बलराम पर झपटा। इन दोनों बालकों ने एक-दो दांव में दोनों पहलवानों को पछाड़ दिया और खेल-खेल में ही दोनों को मार डाला। दूर-दूर बैठे सभी लोग और अन्य पहलवान दोनों बालकों की प्रशंसा करतल-ध्वनि से करने लगे। यह देखकर कंस को बहुत पीड़ा हुई उसका षड्यन्त्र असफल हो गया था। कंस स्वयं जोश में आ गया। वह तलवार लेकर अखाड़े में आ धमका। श्री कृष्ण तो चाहते यही थे कि किसी प्रकार कंस स्वयं उन पर वार करे और अखाड़े में उतर आए। श्री कृष्ण ने कंस को उठा कर ज़मीन पर पटक कर मारा और उसकी छाती पर मुष्टिक प्रहार करने लगे।

यह देख कर कंस का भाई सुनामा दौड़ कर कंस की सहायता के लिए आया परन्तु उसे बलराम ने दबोच लिया। दोनों वीरों ने लोगों पर चिरकाल से अत्याचार करने वाले अत्याचारियों का काम तमाम कर दिया।

श्री कृष्ण द्वारा कंस को मार दिए जाने पर वहां बैठे हज़ारों लोगों में से एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जिसने कंस का साथ दिया हो। यहां तक कि कंस के सिपाही, मन्त्री, राज दरबारी सभी तो बैठे थे। कंस की मृत्यु पर वहां बैठे सभी लोगों ने श्री कृष्ण और बलराम के बल की बहुत सराहना की और कंस के मरने पर प्रसन्नता जताई। कंस अपने षड्यन्त्र में आप ही फंस गया और मारा गया। बिना अधिक रक्तपात बहाए एक अत्याचारी राजा कंस का श्री कृष्ण ने अन्त कर दिया।

इस अवसर पर यदि चाहते तो श्री कृष्ण जी मथुरा के राजा बन सकते थे परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। अपने कुल की परम्पराओं के अनुसार यहां बड़ों का सदा आदर किया जाता था। इसलिए उन्होंने अपने नाना उग्रसेन जी जिनको उनके ही पुत्र कंस ने नज़रबन्द कर रखा था, उसे बुलवाया गया और विद्वान राज पण्डितों को बुला कर उनका पुनः राजतिलक करवाया और राजगद्दी पर बैठाया गया। अपने माता-पिता देवकी व वासुदेव को भी जेल से मुक्त करवाया।

यहां श्री कृष्ण के जहां हमें महान् बल व शक्ति का पता चलता है वहां उनकी बुद्धिमानता का भी पता चलता है। निःस्वार्थ भावना से समाज सेवा करने की भावना का पता चलता है। वह कंस का इसलिए वध नहीं करते कि वह

www.thearyasamaj.org

उनका शत्रु था बल्कि इसलिए वध करते हैं कि एक ऐसा अत्याचारी राजा था जो निर्दोष लोगों को सता रहा था जिससे सारी मथुरा नगरी पीड़ित थी। इसलिए मथुरा की जनता की रक्षा के लिए वह उसका वध करते हैं, लोकोपकार के लिए वध करते हैं।

श्री कृष्ण का बाल्यकाल गोकुल में बीता। एक ग्रामीण वातावरण में बीता, परन्तु फिर भी जिस सूझ-बूझ और जितनी बुद्धिमत्ता व नीतिमत्ता उनके पास थी इतनी किसी व्यक्ति में दिखाई नहीं पड़ती। श्री कृष्ण जी और बलराम ने विधिवत और विनम्र भाव पूर्वक गुरु सान्दीपनि ऋषि के आश्रम में उज्जैन जाकर गुरु चरणों में निवास किया और भागवत पुराण के अनुसार :-

ततश्च लब्ध संस्कारो द्विजत्वं प्राप्य सुव्रतौ।
गर्गाद् यदुकुलाचार्याद् गायत्रं व्रतमास्थितौ।।
प्रोवाच वेदानखिलान् सांगोपनिषदो गुरु।
सरहस्यं धनुर्वेदं धर्मन्याय पंथा स्तथा।
तथा चान्वीक्षिकीं विद्यां राजनीतिं च षड्विधम्।।

अर्थात् श्री कृष्ण और बलराम दोनों का गुरुकुल में पहुंचने पर गर्गाचार्य ने यज्ञोपवीत संस्कार करवाया। गायत्री की दीक्षा दी। श्री कृष्ण जी ने वहां चारों वेद, छः शास्त्रों, उपनिषदों और धर्मशास्त्र और राजनीति शास्त्र का विधिपूर्वक अध्ययन किया। भागवत पुराण के अतिरिक्त महाभारत के सभा पर्व में भी श्री कृष्ण की अग्र पूजा के समय भीष्म पितामह ने कहा-"**वेद वेदांग विज्ञानं बलं चाप्याधिकं**" श्री कृष्ण को वेद, वेदांग और ज्ञान विज्ञान तथा अस्त्र शस्त्र का ज्ञाता बताया है।

कंस की मृत्यु के पश्चात् कंस के श्वसुर जरासंध जो उस समय मगध (आज का बिहार) का राजा था जो बहुत शक्तिशाली था जिसने 86 राजाओं को पराजित करके अपनी जेल में डाल रखा था उसने मथुरा पर आक्रमण कर दिया क्योंकि वह श्री कृष्ण से अपने जमाता कंस के वध का बदला लेना चाहता था क्योंकि कंस के मरने से उसकी दोनों पुत्रियां अस्ति और प्राप्ति विधवा हो गई थी। घमासान युद्ध हुआ। श्री कृष्ण और बलराम की सेना ने जरासंध की सेना को एक बार पछाड़ दिया परन्तु श्री कृष्ण ने देखा कि जरासन्ध की मुझसे दुश्मनी है क्योंकि मैंने उसके जमाता को मारा है इसलिए मैं जब तक मथुरा में रहूंगा वह मथुरा पर चढ़ाई करता रहेगा। इसलिए श्री कृष्ण ने मथुरा छोड़ने का निश्चय कर लिया। क्योंकि यह भी युद्ध नीति का एक हिस्सा है। आम जनता को संहार से बचाने के लिए, यदि मेरे कारण से उनकी हानि हो रही हो तो मुझे वह स्थान छोड़ देना चाहिए। यही विचार करके श्री कृष्ण ने अपने स्थान की तलाश की और समुद्र के किनारे शान्त वातावरण में उन्होंने अपने लिए स्थान ढूंढ लिया। द्वारका नाम की एक नगरी बसा ली। अब वह यहीं रहने लगे और द्वारिका के राजा बन गए।

श्री कृष्ण का विवाह-द्वारिका में आ जाने पर सबसे पहले श्री बलराम का विवाह रैवत राजा की पुत्री रेवती से हुआ। इसी समय विदर्भ देश के राजा भीष्मक ने अपनी पुत्री रूक्मिणी के स्वयंवर का आयोजन किया। भीष्मक एक शक्तिशाली राजा थे परन्तु उन्होंने जरासंध की अधीनता स्वीकार कर ली थी। राजा भीष्मक तथा उसका पुत्र रुक्मी रूक्मिणी का विवाह जरासन्ध के सेनापति श्री कृष्ण की फूफी के लड़के और चेदिराज दम घोष के पुत्र शिशुपाल से करना चाहते थे। किन्तु रूक्मिणी श्री कृष्ण की शक्ति का बखान सुन चुकी थी। वह मन ही मन उनको चाहने लगी थी परन्तु महाराज भीष्मक ने श्री कृष्ण को स्वयंवर का निमन्त्रण नहीं भेजा। रूक्मिणी ने अपना विवाह अपनी इच्छा के विरुद्ध होता देखकर एक वृद्ध-ब्राह्मण के हाथ श्रीकृष्ण को सन्देश भेजा जिसमें उसने स्पष्ट किया कि मैं मन से तुम्हें अपना पति मान चुकी हूँ परन्तु मेरा पिता मेरा विवाह मेरी इच्छा के विरुद्ध शिशुपाल से करना चाहता है जिसे मैं बिल्कुल स्वीकार नहीं करती। इसलिए सन्देश पाकर आप नगर के बाहर उद्यान में आ जाएं, मैं वहां आपकी प्रतीक्षा करूंगी।

श्री कृष्ण जी सन्देश पाकर विदर्भ की राजधानी कुण्डिनपुर की ओर चल पड़े। उधर शिशुपाल को भी गुप्तचरों से यह सन्देश मिल गया। वह भी सेना लेकर कुण्डिनपुर की ओर श्री कृष्ण को रोकने के लिए चल पड़ा।

भ्रमण करने के बहाने ज्यों ही रुक्मिणी उद्यान में पहुंची श्री कृष्ण जी वहां पहले ही रथ लिए विद्यमान थे। वह उसे रथ में बैठा कर द्वारिका की ओर चल पड़े। शिशुपाल ने अपनी सेना सहित उसे रोकने का प्रयास किया परन्तु बलराम जो पहले पूरी तैयारी से वहां सेना सहित पहुंचा हुआ था उसने उसे पछाड़ दिया।

श्री कृष्ण रुक्मिणी को द्वारिका में सादर ले आए और वहां आकर उन्होंने विधिवत विवाह संस्कार के पश्चात् रूक्मिणी को अपनी पत्नी स्वीकार कर लिया। यहां मैं यह बात स्पष्ट

www.thearyasamaj.org

कर देना चाहता हूँ कि श्री कृष्ण का विवाह केवल रुक्मिणी से हुआ। इसकी साक्षी महाभारत ग्रन्थ भी देता है। जो लोग श्री कृष्ण की 16 हज़ार रानियां मानते हैं और उनका सम्बन्ध गोपियों के साथ तथा राधा से जोड़ते हैं उनको आश्चर्य होगा कि श्री कृष्ण जी इतने संयमी और जितेन्द्रिय थे कि विवाह के पश्चात् रूक्मिणी ने यह इच्छा प्रकट की कि मैं हूबहु आप जैसी सन्तान चाहती हूँ जो रूप, रंग और शक्ति में आप जैसी हो। उस काल में हमारे देश के गृहस्थी मनचाही सन्तान पैदा किया करते थे। श्री कृष्ण ने रूक्मिणी से कहा इसके लिए हमें 12 वर्ष तक जितेन्द्रिय रहकर संयमी बन कर हिमालय की कन्दराओं में तप करना पड़ेगा। रूक्मिणी इसके लिए एकदम तैयार हो गई। दोनों ने 12 वर्ष तक तप करके प्रद्युम्न नाम के एक पुत्र रत्न को प्राप्त किया जो श्री कृष्ण की प्रतिमूर्ति था जिसे युवा होने पर स्वयं रूक्मिणी भी उन्हें पहचानने में कई बार भ्रम में पड़ जाती थी।

श्री कृष्ण और पाण्डव सम्बन्ध-महाभारत के अनुसार श्री कृष्ण और पाण्डवों का मिलन पहली बार द्रोपदी के स्वयंवर में होता है। पांचाल देश के राजा द्रुपद ने अपनी सुपुत्री द्रोपदी का स्वयंवर रचाया हुआ था। देश विदेश के बहुत से राजा वहां बुलाए हुए थे। राजा द्रुपद ने एक बहुत भारी धनुष कमान बनवाया हुआ था जिस पर चिल्ला चढ़ाना प्रत्येक नौजवान के वश की बात नहीं थी। इसके साथ ही उन्होंने आकाश में एक यन्त्र बनवाया हुआ था। कहा जाता है एक बनावटी मछली बनवाई हुई थी। कमान पर चिल्ला चढ़ा कर मछली की आंख को नीचे तेल के कड़ाहे में देख कर बेधना था। द्रोपदी श्री कृष्ण की फुफेरी बहिन थी, इसलिए श्री कृष्ण और बलराम भी इस स्वयंवर में वहां पहुंचे हुए थे।

एक एक करके राजकुमार उठकर धनुष को उठाने का प्रयास करते थे, कोई भी न धनुष उठा सका और न ही निशाने को वेध सका। इसके बाद वहां उपस्थित कर्ण उठा। जब वह धनुष उठाने लगा तो द्रोपदी ने कहा-यदि वह शर्त जीत भी जाता है तो भी मैं इस सूत पुत्र से विवाह नहीं करूंगी। वह वहीं बैठ गया।

राजा द्रुपद यह देखकर चिन्तित हुए कि कोई क्षत्रिय राज कुमार लक्ष्य को नहीं बेध सका क्या मेरी लड़की कुमारी रहेगी। इस पर एक ब्राह्मण वेषधारी युवक उठा और धनुष की ओर बढ़ा। उसने धनुष को बड़ी आसानी से उठाया और देखते ही देखते निशाने को वेध दिया। द्रोपदी को कोई ब्राह्मण कुमार स्वयंवर में जीत कर ले जाए यह वहां उपस्थित राजकुमारों को कहां स्वीकार था। इस पर सब लड़ने के लिए तैयार हो गए। परन्तु भीम ने पास में खड़े एक वृक्ष को उखाड़ कर जब उसकी गदा बनाई और उसका सुडौल शरीर दिखाई देने लगा तो श्री कृष्ण जी को यह समझते देर नहीं लगी कि लक्ष्य बेधने वाला ब्राह्मण वेषधारी युवक अर्जुन है और यह वृक्ष उखाड़ने वाला नौजवान भीम है। जब अर्जुन और भीम ने आए हुए राज कुमारों से दो-दो हाथ किए और उन्हें पछाड़ा तो श्री कृष्ण ने अपने प्रभाव का प्रयोग करते हुए रक्तपात होने से बचाते हुए कहा भाई यहां धर्मपूर्वक ब्राह्मण कुमार ने स्वयंवर जीता है अब सब अपने-अपने घरों को जाओ। राजा द्रुपद की चिन्ता को दूर करते हुए श्री कृष्ण ने कहा कि यह स्वयम्वर जीतने वाला युवक ब्राह्मण नहीं है, यह अर्जुन है व दूसरा यह गदाधारी भीम है, यह युधिष्ठिर और नकुल, सहदेव हैं। उन्होंने कहा "गूढोऽग्निर्ज्ञायत एव राजन, अर्थात् अग्नि छिपाने पर भी सर्वथा छिपी नहीं रह सकती वह अपना पता स्वयं दे देती है। उसका पता लग ही जाता है।" यह जानकर द्रुपद को सन्तोष हुआ। क्योंकि ऐसा समझा जा रहा था कि एक षड्यन्त्र के तहत पाण्डवों को दुर्योधन ने लाक्षागृह में जला कर मार डाला है। पाण्डवों के जीवित होने की बात को जानकर श्रीकृष्ण बहुत प्रसन्न हुए। जब पाण्डव द्रोपदी को लेकर अपने निवास स्थान पर जाने लगे तो श्री कृष्ण और बलराम भी उनके पीछे-पीछे वहां चले गए और माता कुन्ती से भी मिले और लाक्षा-गृह की सारी घटना की जानकारी भी प्राप्त की। विधिवत रूप से इसके पश्चात् बड़े भाई युधिष्ठिर के साथ द्रोपदी का विवाह संस्कार सम्पन्न हुआ। यह भारतीय मर्यादा थी। बड़े भाई से पहले छोटे भाई का विवाह नहीं हो सकता था। चाहे स्वयंवर छोटे भाई अर्जुन ने ही क्यों न जीता हो। जो लोग द्रोपदी को अर्जुन की पत्नी समझते हैं वह भूल में हैं। अर्जुन की पत्नी का हम आगे जाकर ज़िकर करेंगे।

महाराज द्रुपद से पाण्डवों का सम्बन्ध हो जाने से अब उन्हें छिप कर रहने की आवश्यकता नहीं रही। धीरे-धीरे यह सूचना सब को मिल गई। विदुर जी पाण्डवों को लेने के लिए गए और उनको बुला कर धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को खाण्डव वन का राज्य दे दिया। पाण्डवों ने उस खाण्डव वन को भी बाग बगीचों व भवनों से सजा कर एक सुन्दर राज्य बना दिया। इसी नगर का प्राचीन नाम इन्द्रप्रस्थ है। श्री कृष्ण जी युधिष्ठिर का राज्याभिषेक करवा कर वापिस द्वारिका पुरी चले

www.thearyasamaj.org

गए।

कुछ समय के पश्चात् अर्जुन घूमने के लिए प्रभास नाम के स्थान पर गए जो द्वारिका के समीप पड़ता था। श्री कृष्ण को इसका पता चला और वह अपने सखा को मिलने के लिए वहां पहुंच गए और आदर सहित श्री कृष्ण जी अर्जुन को रथ में बैठाकर द्वारिकापुरी ले आए। श्री कृष्ण ने अपने सखा अर्जुन के स्वागत में सारी नगरी को दुल्हन की तरह सजाया। अर्जुन कुछ दिन वहीं रहे। इसी अवसर पर रैवतक पर्वत पर एक मेला लगा हुआ था। यह यादव परिवारों का मेला लगता था। सुन्दर सजे हुए रथों पर सवार होकर बाजों के साथ सब वहां आए हुए थे। श्री कृष्ण भी अर्जुन के साथ इस मंगलोत्सव को देखने के लिए आए। श्री कृष्ण की बहन सुभद्रा भी वहां अपनी सखियों के साथ आई हुई थी। अर्जुन और सुभद्रा ने वहां जब एक दूसरे को देखा तो वह अपने पर संयम नहीं रख सके। श्री कृष्ण जी दोनों की मनोभावनाओं को जान गए। उन्होंने अर्जुन से पूछा यदि तुम्हारी इच्छा सुभद्रा से विवाह करने की है तो पिता जी से बात करूँ। अर्जुन ने स्वीकृति दे दी। अर्जुन ने दूत भेजकर अपने भाई युधिष्ठिर से भी स्वीकृति ले ली। श्री कृष्ण ने सुभद्रा को अर्जुन के रथ में बिठवा दिया। इस पर बलराम तथा दूसरे यादव कुल वासी भड़क उठे। युद्ध जैसी स्थिति बन गई। श्री कृष्ण ने सबको समझाया। अर्जुन एक उच्च कुल का नौजवान है। ये भरत वंशज शान्तनु का परपौत्र और कुन्ति भोज का दोहित्र है और बहन सुभद्रा ने स्वयं इसे अपनी इच्छा से वरण किया है। इसलिए इस विषय में कोई हो हल्ला मचाने की आवश्यकता नहीं है। इस पर श्री कृष्ण के समझाने पर सभी लोग शान्त हो गए और अर्जुन को वहीं रोक लिया गया और बड़ी धूम धाम से समारोह पूर्वक अर्जुन और सुभद्रा का विवाह संस्कार किया गया और उसके बाद सुभद्रा को लेकर अर्जुन इन्द्रप्रस्थ वापिस आ गए।

अब पाण्डवों ने इन्द्रप्रस्थ में अपनी राजधानी बना ली थी। श्री कृष्ण ने युधिष्ठिर को सलाह दी कि अब आपको राजसूय यज्ञ करना चाहिए। युधिष्ठिर के मन्त्रिमण्डल ने इसका समर्थन किया। श्री कृष्ण ने कहा कि राजसूय यज्ञ में एक ही व्यक्ति अड़चन डाल सकता है और वह है मगध नरेश जरासन्ध, जो एक शक्तिशाली राजा है जिसने 86 राजाओं को अपनी जेल में डाल रखा है, वह उनकी संख्या सौ होने पर उन्हें मौत के घाट उतार देना चाहता है। यह एक बहुत बड़ा अन्याय होगा इसलिए पहले नीति के द्वारा जरासन्ध पर विजय प्राप्त की जाए। हम उसे चुपचाप उसके महलों में जाकर ललकारें ताकि सैनिकों का रक्तपात न हो। आप मुझे भीम और अर्जुन को दे दो, हम तीनों उसके पास जाएंगे।

युधिष्ठिर ने अनुमति दे दी और श्री कृष्ण भीम और अर्जुन को साथ लेकर ब्राह्मणों का वेश बनाकर मगध में पहुंच गए। जरासन्ध ब्राह्मणों तथा स्नातकों का स्वागत व आदर करता था इसलिए यह तीनों मगध की राजधानी गिरिव्रज की ओर चल पड़े। रास्ते में एक माली से पुष्प मालाएं लेकर गले में डालकर राजगृह में प्रवेश कर राजा के महल तक पहुंच गए। जरासन्ध ने महल में ब्राह्मण वेश में आए स्नातकों का मधुपर्क आदि से स्वागत किया। श्री कृष्ण ने कहा कि इन दोनों का मौन व्रत है। रात्रि 12 बजे इनका मौन व्रत खुलेगा, तब आप आना फिर बैठकर बात करेंगे। जरासन्ध यज्ञशाला के पास उनका ठहरने का प्रबन्ध करके चला गया। उसे द्वारपालों ने सूचना दी कि यह तीनों ब्राह्मण मुख्य द्वार से अन्दर नहीं आए। गिरिश्रृंग तोड़ कर आए हैं और यह ब्राह्मण नहीं, क्षत्रिय लगते हैं। जब जरासन्ध रात्रि बारह बजे मिलने के लिए आया तो श्री कृष्ण ने उसे स्पष्ट बता दिया कि यह भीम और अर्जुन हैं, मैं श्री कृष्ण हूँ और द्वन्द्व युद्ध के लिए हम यहां आए हैं। हम तीनों में से आप किसी एक के साथ युद्ध कर सकते हैं। जरासन्ध अभिमानी था। उसने कहा अर्जुन मेरे बराबर का नहीं है। तुम कई बार युद्ध छोड़कर मुझ से भाग चुके हो इसलिए भीम से ही मेरा द्वन्द्व युद्ध हो सकता है। श्री कृष्ण भी यही चाहते थे। कहते हैं कि कई दिन तक यह मल्ल युद्ध चलता रहा। अन्त में भीम को श्री कृष्ण ने एक इशारे से समझाया कि शत्रु थक चुका है, इसे टांगों से पकड़ कर चीर डाल। भीम ने ऐसा ही किया और बड़ी फुर्ती से जरासन्ध की दोनों टांगों को पकड़ कर उसे बीच में से चीर दिया और जरासन्ध मर गया। जरासन्ध के मरते ही श्री कृष्ण ने सभी 86 पूर्व बन्दी राजाओं को बन्दीगृह से छुड़वाया। सभी ने श्री कृष्ण का बहुत-बहुत धन्यवाद किया व आभार प्रकट किया। श्री कृष्ण ने उन सभी राजाओं को युधिष्ठिर के साथ मिलने की सलाह दी। श्री कृष्ण ने उसी समय जरासन्ध के पुत्र सहदेव को राजसिंहासन पर बैठा दिया। इससे युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ का मार्ग प्रशस्त हो गया। युधिष्ठिर को उन 86 राजाओं का भी सहयोग मिल गया और जरासन्ध के पुत्र सहदेव का भी सहयोग मिल गया।

कई लोग कहेंगे कि यह श्री कृष्ण ने जरासन्ध के साथ

www.thearyasamaj.org

धोखा किया परन्तु यहां ऐसी बात नहीं है। जरासन्ध एक दुष्ट प्रवृत्ति व क्रूर प्रवृत्ति का व्यक्ति था फिर वह 86 निर्दोष राजाओं की हत्या का पाप करने जा रहा था। ऐसे में एक पापी को मारना कोई अधर्म नहीं है। श्री कृष्ण ने अपनी नीति से एक को मार कर सैकड़ों की जान बचाई इसलिए यह पुण्य का कार्य हुआ।

पाण्डवों के राजसूय यज्ञ की तैयारियां आरम्भ हुई। सबको यज्ञ की व्यवस्था का कार्य सौंपा गया। श्री कृष्ण ने इस यज्ञ में अपने जिम्मे ब्राह्मणों तथा अतिथियों के पांव धोने का कार्य लिया। इससे पता चलता है कि श्री कृष्ण जी में ब्राह्मणों और अतिथियों के लिए कितनी श्रद्धा थी।

युधिष्ठिर की यज्ञ में दीक्षा होने के पश्चात् जब अर्घ देने का अवसर आया तो भीष्म जी को अग्रपूजा के लिए किसी एक व्यक्ति का चयन करने के लिए कहा गया। भीष्म जी ने वहां उपस्थित सभी राजाओं महाराजाओं को देखा और उसके बाद कहा कि मैं यहां उपस्थित सभी राजाओं में श्री कृष्ण को पूज्य समझता हूँ। क्योंकि अर्घ, आचार्य, ऋत्विज, स्नातक और राजा को दिया जाता है। श्री कृष्ण में यह सब गुण विद्यमान हैं। श्री कृष्ण ने आज तक जितने भी कार्य किए सभी लोग उनकी मुक्त कण्ठ से सराहना करते हैं और इनके यश व शौर्य पर सभी मुग्ध हैं। भीष्म के कहने पर सहदेव ने श्री कृष्ण को अर्घ प्रदान किया।

यहां एक घटना इस समय घट गई कि श्री कृष्ण का विरोधी शिशुपाल खड़ा हो गया और वह द्वेषवश श्री कृष्ण की निन्दा करने लगा। कहा जाता है कि उसने उस समय श्री कृष्ण को एक सौ गालियां दे डाली परन्तु श्री कृष्ण जी कुछ नहीं बोले परन्तु जब उसने एक गाली और दी तथा वह तलवार लेकर श्री कृष्ण की ओर लपका तो श्री कृष्ण ने अपना सुदर्शन चक्र छोड़कर उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। वहां बैठे सभी राजाओं ने श्री कृष्ण के धैर्य की प्रशंसा की और शिशुपाल के कार्य की निन्दा की। श्री कृष्ण ने उसी समय शिशुपाल के पुत्र को राजा बना दिया। शिशुपाल रिश्ते में श्री कृष्ण की फूफी का पुत्र था।

शिशुपाल के वध से उसका मित्र शाल्व जो शाल्वपुर का राजा था, क्रुद्ध हो गया। श्री कृष्ण अभी इन्द्रप्रस्थ में ही थे कि उसने द्वारिका पर चढ़ाई कर दी। द्वारिका को श्री कृष्ण ने युद्ध की दृष्टि से एक दुर्गनुमा बनाया हुआ था। उसके चार द्वार थे। चारों पर सैनिकों का पहरा था। शत्रु के हमले की जानकारी देने वाले यन्त्र लगे हुए थे। लड़ाई का सामान जगह-जगह रखा हुआ था। सब ओर बुर्ज थे। बीच का बुर्ज बहुत ऊंचा था। इन बुर्जों पर पहरेदार तैनात थे जो पल-पल की खबर राजा को देते थे। शाल्व का सेनापति युद्ध में मारा गया। घमासान युद्ध चल रहा था अब शाल्व खुद रथ में बैठकर युद्ध करने लगा। उसका सामना श्री कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न से हुआ। लड़ते-लड़ते दोनों मूर्च्छित हो गए। प्रद्युम्न का सारथी रथ को युद्ध से बाहर ले आया जब प्रद्युम्न को चेतना आई तो उसने सारथी को धमकाया कि युद्ध से भाग जाना तो कायरता है। वह पुनः शाल्व से आ भिड़ा और इतना भयंकर युद्ध हुआ कि शाल्व भाग खड़ा हुआ। यह समाचार सुन कर इन्द्रप्रस्थ से श्री कृष्ण द्वारिका पहुंचे। श्री कृष्ण ने अपनी सेना लेकर अब स्वयं शाल्व पर हमला बोल दिया। शाल्व एक अभेद्य विमान को लेकर लड़ने के लिए निकला परन्तु श्री कृष्ण ने अपने आग्नेय शस्त्र-अस्त्रों से उसके विमान को तोड़ डाला और शाल्व को मार गिराया। इस प्रकार शाल्व की द्वार का विजय की कामना सदा के लिए समाप्त हो गई।

श्री कृष्ण की हम यह महानता देखते हैं कि वह तब तक शत्रु पर वार नहीं करते जब तक वह उन पर स्वयं वार न करें। शिशुपाल पर भी वह तब ही वार करते हैं जब शिशु पाल उन्हें मारने के लिए उनकी तरफ दौड़ता है। राजा शाल्व पर भी वह तब तक चढ़ाई नहीं करते जब तक वह स्वयं द्वारिका पर चढ़ाई नहीं करता। उन्होंने जीवन भर धर्मात्मा लोगों का साथ दिया परन्तु अत्याचारियों व पापियों को उन्होंने कभी क्षमा नहीं किया। वह बिना रक्तपात के शत्रु का नाश करने में विश्वास रखते थे।

श्री कृष्ण जी ने द्वारिका पुरी को समुद्र के किनारे इसलिए भी बसाया था ताकि उन्हें यह पता चलता रहे कि विदेशों से समुद्र के रास्ते से कितनी घुसपैठ भारत में हो रही हैं क्योंकि उस काल में विदेशों से भारत में घुसपैठ आरम्भ हो गई थी। उस काल में भारत सोने की चिड़िया कहा जाता था। हमारा देश धन-धान्य से पूरी तरह से भरपूर था। विदेशी लोग ललचाई नज़रों से भारत की ओर देखते रहते थे। दूसरी बात यह थी कि द्वारिका एक सुरक्षित नगरी थी। सुसज्जित नगरी थी जिसकी अपनी एक विशेष शोभा थी। सारी व्यवस्था बहुत ही सुन्दर ढंग की बनाई हुई थी।

श्री कृष्ण का मित्र भाव-श्री कृष्ण जी जब गुरु सान्दीपनि के पास विद्या ग्रहण कर रहे थे वहां सुदामा नाम का एक

www.thearyasamaj.org

ब्राह्मण बालक भी शिक्षा ग्रहण कर रहा था। श्री कृष्ण का सुदामा से विशेष स्नेह हो गया। दोनों ही यज्ञ के लिए जंगल से समिधाएं लेने के लिए इकट्ठे जाया करते थे। श्री कृष्ण जी सुदामा का बहुत ध्यान रखते थे और उसको सभी तरह का सहयोग देते थे। पढ़ाई समाप्त करने के पश्चात् सुदामा अपने गांव चला गया और श्री कृष्ण जी द्वारिका के राजा बन गए। सुदामा गृहस्थी था उसके छोटे-छोटे बच्चे थे परन्तु उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। उसने एक बार अपनी धर्मपत्नी को बताया कि द्वारिका का राजा श्री कृष्ण मेरा मित्र है। हम दोनों ने गुरु सान्दीपनि के पास एक साथ शिक्षा प्राप्त की है। धर्म पत्नी ने सलाह दी कि हमारी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। कई बार बच्चे भी भूखे रह जाते हैं। इसलिए आप अपने मित्र के पास जाकर कुछ आर्थिक सहायता मांगो ताकि परिवार का गुजारा ठीक ढंग से चलता रहे। सुदामा ने कहा मैं भी ऐसा कई बार सोचता हूँ कि आर्थिक सहायता के लिए मैं अपने मित्र के पास जाऊं परन्तु पहली बात तो यह है कि वह एक राजा है और मैं एक साधारण ब्राह्मण हूँ। वह राज महलों में रहता है। मेरे पास टूटी हुई झोंपड़ी है। वह रेशमी वस्त्र पहनता हैं, मेरे पास फटे पुराने कपड़े हैं। यहां तक कि मेरे पांव में तो एक जूती भी नहीं है वह भी टूट चुकी है फिर इतने बड़े मित्र को मिलने जाने के लिए साथ में कुछ भेंट भी लेकर जाना चाहिए। कोई मिठाई आदि या कोई और भेंट की वस्तु खरीदने के लिए भी मेरे पास पैसे नहीं हैं। क्या लेकर मित्र के पास जाऊं, कैसे जाऊं यही सोचता रहता हूं ? इसीलिए आज तक मैं अपने मित्र के पास नहीं जा सका।

सुदामा की धर्म पत्नी ने घर के बर्तनों को टटोला तो उसने देखा एक बर्तन में कुछ चावल पड़े हैं। उसने एक कपड़ा लेकर चावल उसमें बांध कर एक पोटली बना दी और कहा लो यह चावल ले लो और जाओ अपने मित्र को मिल आओ। उसने कहा-'कहां यह मामूली से चावल कहां वह इतना बड़ा राजा।' मैं यह चावल उसे नहीं दे पाऊंगा। परन्तु चलो खाली हाथ जाने से तो ठीक है यह चावल ही साथ लेकर चलता हूँ। सुदामा उस चावलों की पोटली को लेकर चल पड़ा।

सुदामा अपने गांव से द्वारिका की ओर चल पड़ा। रास्ते में वह यह सोचता हुआ जा रहा था कि बहुत दिनों के बाद श्री कृष्ण से मिलन होगा पता नहीं वह पहचानेगा भी या नहीं। हो सकता है वह कह दे कि मैं किसी सुदामा को नहीं जानता। फिर विचार आया जब एक मित्र दूसरे मित्र से मिलने जाता है तो अमूल्य भेंट लेकर जाता है। मेरे पास तो साधारण चावलों के सिवाय कुछ भी अपने मित्र को देने के लिए नहीं है। वह इन विचारों में डूबा हुआ द्वारिका में पहुंच गया और पूछता-पूछता श्री कृष्ण के महल के द्वार पर पहुंच गया। वह महल को देखकर आश्चर्यचकित हो रहा था क्योंकि यह महल बहुत प्रसिद्ध कारीगरों का बनाया हुआ था। इतने में द्वारपाल ने पूछ लिया कि तुम कौन हो यहां क्यों आए हो ? तुम्हें किससे मिलना है ?

सुदामा ने साहस बटोर कर कहा कि मेरा नाम सुदामा है। श्री कृष्ण महाराज मेरे मित्र हैं, मैं उन्हें मिलने के लिए यहां आया हूँ। द्वारपाल ने सिर से पांव तक सुदामा को देखा। वह उसके तन के फटे कपड़ों को देखकर, नंगे पांव को देखकर, आश्चर्यचकित रह गया कि क्या यह इतना निर्धन व्यक्ति महाराज श्री कृष्ण का मित्र हो सकता है। द्वारपाल ने कहा इस समय महाराज किसी से नहीं मिलते। जाओ फिर किसी समय आना। यह सुन कर सुदामा ने द्वारपाल से कहा कि आप एक बार मेरा सन्देश श्री कृष्ण को पहुंचा दो कि तुम्हारा मित्र सुदामा तुम्हें मिलना चाहता है, वह अपना नाम सुदामा बताता है।

श्री कृष्ण जी ने जब सुदामा नाम सुना तो तुरन्त उन्हें गुरुकुल की स्मृति आ गई और कहते हैं कि श्री कृष्ण ने वहां उपस्थित किसी भी अधिकारी या द्वारपाल को यह नहीं कहा कि उस ब्राह्मण को मेरे पास ले आओ या उसे अन्दर आने दो, कहते हैं सुदामा नाम सुनते ही श्री कृष्ण जी इतने प्रसन्न हुए कि उनको अपने जूते तक पहनने का ध्यान नहीं रहा। नंगे पांव ही वह द्वार की तरफ दौड़ पड़े। जब द्वार पर उन्होंने दीन-हीन दशा में सुदामा को छाती से लगा लिया और कहा मेरे सखा इतने दिन कहां रहे। मुझे पहले क्यों नहीं मिलने आए। यह तुमने अपनी क्या दशा बना रखी है।

श्री कृष्ण सुदामा को साथ लेकर अपने महल में चले गए। उन्हें तख्त पर बैठाकर सबसे पहले स्वयं पानी व परात्त लेकर अपने हाथ से सुदामा के पांवों को धोने लग गए। रुक्मिणी चाहती थीं कि वह श्री कृष्ण की धर्मपत्नी होने के नाते स्वयं अतिथि के पांव धोवे परन्तु श्री कृष्ण ने अपनी धर्मपत्नी से कहां इस अतिथि के पांव मैं स्वयं धोऊंगा क्योंकि यह मेरा मित्र सुदामा है। यह भी कहा जाता है कि श्री कृष्ण जी जब सुदामा के पांव धो रहे थे तो उनके पांव में पड़ी बुवाइयों को

www.thearyasamaj.org

देखकर और उनमें चुभे हुए कांटों के निशानों को देख कर रो उठे। उनकी आंखों से आँसू निकल रहे थे और वह सुदामा के पांवों पर पड़ रहे थे। आँसूओं से ही सुदामा के पांव धुल गए थे। सच्चाई यही है कि श्री कृष्ण ने स्वयं अपने मित्र के पांव अपने हाथ से धोए। उसके लिए अच्छे-अच्छे नए-नए वस्त्र मंगवा कर उसे भेंट किए स्वयं अपने साथ बैठा कर मधुपर्क आदि भेंटकर सुदामा का स्वागत किया।

श्री कृष्ण ने देखा सुदामा पोटली में कुछ लाया है परन्तु संकोचवश उसे देना नहीं चाहता। श्रीकृष्ण जानता था कि सुदामा गरीब भले ही है परन्तु वह अपने मित्र के घर खाली हाथ नहीं आया। वह शिष्टाचार को जानता है इस पर श्री कृष्ण ने सुदामा से चावलों की पोटली ले ली और कहा मित्र तेरी यह भेंट बहुत अच्छी है। संकोच न करो, कहते हैं श्री कृष्ण ने उन चावलों में से थोड़े चावल जब खाए तो सुदामा का हृदय गद्‌गद् हो गया। वह अपने आप को धन्य समझने लगा।

सुदामा सात दिन तक द्वारिका में रहे। श्री कृष्ण जी महाराज ने अपने इस मित्र की बहुत सेवा की। सारी द्वारिका में रथ पर बैठा कर उसे घुमाया। मखमली गद्दों पर उसे सुलाया। एक से एक बढ़कर अच्छी प्रकार का भोजन करवाया। सुदामा वहां इतना तल्लीन हो गया कि वह अपनी पत्नी और बच्चों को भी भूल सा गया। सात दिन बीत जाने पर उसको बच्चों की याद आई और उसने अपने मित्र से कहा कि वह अपने घर अपने बच्चों के पास जाना चाहता है।

श्री कृष्ण ने रथ मंगवाया और रथवान को कहा जाओ सुदामा को उसके गांव उसके घर छोड़ आओ। श्री कृष्ण ने सुदामा को और कुछ दिन द्वारिका में रुकने के लिए भी कहा परन्तु सुदामा को अब बच्चों की याद सताने लगी थी। उसने कहा कि मैं अब जल्दी अपने घर जाना चाहता हूँ।

सुदामा को रथ में बैठकर सारथि सुदामा के गांव की तरफ चल पड़ा। सुदामा सोच रहा था आया तो मित्र से आर्थिक सहायता मांगने के लिए था परन्तु सात दिनों में एक बार भी वह कुछ मांगने के लिए साहस नहीं जुटा पाया। अब वह खाली हाथ वापिस जाते हुए विचार कर रहा था कि मैंने सात दिन अपने व्यर्थ खो दिए। इन दिनों में मैं अपने बच्चों के लिए भोजन जुटा लेता वह भी नहीं जुटा पाया। घर में भोजन का सामान नाममात्र था वह तो कभी का समाप्त हो गया होगा। बच्चे व पत्नी भूखे मर रहे होंगे। मैं तो भर पेट भोजन करता रहा। बहुत स्वाद भोजन खाता रहा। वस्त्र भी मुझे नए-नए मिल गए हैं। बच्चों के पास तो पहनने के लिए वस्त्र भी नहीं थे। उसके मन में आया कि यह कैसा मित्र है। मेरी तो खूब सेवा करता रहा परन्तु सात दिन में बच्चों के बारे में एक बार नहीं पूछा कि उनकी दशा क्या है। मैंने भी संकोचवश कुछ न मांगा और न मित्र ने बिना मांगे मुझे कुछ दिया। अब रथ में बैठाकर खाली भेज दिया। अब भी कोई अन्न, धन, वस्त्र या वस्तु कुछ भी तो बच्चों के लिए नहीं दिया।

इसी तरह मन की उधेड़ बुन में रास्ता समाप्त हो गया और अब रथ सुदामा के घर के आगे आकर खड़ा हो गया। सुदामा ने रथ के रुकते ही चारों तरफ अपनी आंखें दौड़ाई उसे कहीं उसकी झोंपड़ी नज़र नहीं आई। उसने देखा वहां एक शानदार महल खड़ा है। कभी वह सोचता मैं गलत स्थान पर आ गया हूँ। कभी वह मन में सोचता कि कहीं किसी ने मेरी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर मेरी झोंपड़ी पर कब्ज़ा करके यहां से मेरे बच्चों को निकाल दिया है और अपना भवन बना लिया है। बहुत चिन्तित सा होकर सुदामा रथ से नीचे उतरने लगा। सारथी ने कहा-महाराज आपका घर आ गया है, यही आपका घर है। आप अपने बच्चों के पास जाएं। सुदामा ज्यों ही रथ से नीचे उतरा, ऊपर के चौबारे से उसकी पत्नी बहुत ही सुन्दर वस्त्र व आभूषण पहन कर उसका स्वागत करने के लिए नीचे आ रही थी। बच्चे नए-नए वस्त्र पहने दौड़ कर सुदामा से आ लिपटे। पत्नी आरती का थाल सजा कर दरवाज़े पर खड़ी सुदामा का इन्तज़ार कर रही थी। उसने सुदामा का घर पहुंचने पर हार्दिक स्वागत किया। सुदामा यह सब देखकर चकित था कि यह सब कुछ क्या है ? सुदामा ने अपनी पत्नी से पूछ यह सब क्या है ? किसने यह महल बनाया है, किसने तुम्हें यह वस्त्र, आभूषण और इतना धन व अन्न आदि दिया है।

सुदामा की धर्मपत्नी ने कहा जिस दिन आप द्वारिका में गए थे उससे दूसरे दिन ही यह भवन बनना आरम्भ हो गया था। आपके मित्र श्री कृष्ण ने कारीगर भेज दिए थे। तीन चार दिन में द्वारिका के कुशल कारीगरों ने यह महल तैयार कर दिया। साथ ही साथ सभी प्रकार के सामान, अन्न, धन, वस्त्र, सभी परिवार की आवश्यकता की वस्तुएं यहां पहुंच गई। आपके मित्र ने आपके आने का सन्देश भी मुझे भेज दिया था कि आप आज द्वारिका से आ रहे हैं। मैं आपकी बहुत देर से इन्तज़ार कर रही हूँ। पत्नी की बातें सुनकर अब सुदामा और

www.thearyasamaj.org

भी गहरी सोच में पड़ गया तब पत्नी ने पूछा क्या बात है ? अब तो हमारे पास सब कुछ है, अब आप चिन्ता में क्यों डूब गए हैं। यहां सब कुछ तो आपके मित्र श्री कृष्ण ने ही किया है। आपका मित्र बहुत महान दानी है, उसने इतना धन हमें दे दिया है जिसकी हमें आशा भी नहीं थी। वास्तव में वह आपका सच्चा मित्र है। मैं तो आपको पहले भी कई बार कहती थी कि आप अपने मित्र के पास जाओ परन्तु आप जाते नहीं थे कि पता नहीं वह मुझे पहचानेगा या नहीं। परन्तु आपके मित्र ने तो हमें मालामाल कर दिया।

सुदामा ने कहा कि मैं इसलिए परेशान हो रहा हूँ कि यह कैसा मित्र है। मैं द्वारिका में सात दिन रहा। मैंने उससे कोई सहायता नहीं मांगी। वह मेरी सेवा करता रहा, उसने यहां मेरा घर बनवा दिया, इसे धन धान्य से भर दिया। मुझे उसने बताया तक नहीं कि वह मेरा घर बनवा रहा है। इसका मुझे पता तक नहीं चलने दिया। किसी बात की कोई चर्चा नहीं की। द्वारिका से चलने लगा उसने तब भी मुझे नहीं बताया कि तुम अपने घर जा रहे हो वहां तुम्हारा घर मैंने नया बनवा दिया है। यह कैसा मित्र है जो मित्र की सहायता करके उसे यह भी बताना नहीं चाहता कि मैंने तुम्हारी सहायता कर दी है। सुदामा आश्चर्य में डूबा हुआ अपने नए भवन में गया और उसकी बनावट को देखकर साज-सज्जा को देखकर अपने मित्र को दुआएं देने लगा। यदि मित्र हो तो ऐसा हो।

श्री कृष्ण की यह कितनी महानता है कि जब सुदामा श्री कृष्ण से द्वारिका में मिला तो सुदामा की हालत को देखकर उन्हें यह समझने में देर नहीं लगी कि सुदामा का परिवार कैसे गुजारा करता होगा। उसने उसी समय गुप्तचर भेज कर सुदामा के घर की परिवार की सारी जानकारी प्राप्त की और उसी समय झोंपड़ी के स्थान पर सुन्दर भवन बनाने का आदेश दे दिया। अन्न-वस्त्र आदि सभी पदार्थ सुदामा के घर भेज दिए। उसे पता था कि सुदामा एक ऐसा ब्राह्मण है जो मुझसे सहायता नहीं मांगेगा, इसलिए उसने बिना मांगे ही सुदामा की ज़रूरतों का पता लगाया और उसे ज़रूरत थी वह सब कुछ वहां पहुंचा दिया। वह सुदामा को यह बता कर शर्मिन्दा नहीं करना चाहता था कि मैंने तुम्हारा घर बनवा दिया और धन धान्य भेज दिया।

भारत के इतिहास की यह एक अनोखी घटना है जो जब तक दुनिया रहेगी यह घटना श्री कृष्ण जी के यश और कीर्ति को गाती रहेगी। यह पहली और अन्तिम घटना कही जा सकती है। आज तक न किसी मित्र ने अपने मित्र के लिए इतना बड़ा कार्य किया और न ही कोई आगे कर सकेगा ?

1. महर्षि वेदव्यास की सम्मति में श्री कृष्ण।

यो वै कामान्न भयान्न लोभान्नार्थकारणात्।
अन्यायमनुवर्त्तते स्थिरबुद्धिरलोलुपः।
धर्मज्ञो धृतिमान् प्राज्ञः सर्वभूतेषु केशवः॥

(महा उद्योग० अ० ८३)

अर्थात् पाण्डवों की ओर से दूत रूप में जाने के लिये उत्सुक श्री कृष्ण के विषय में वेदव्यास जी कहते हैं-श्री कृष्ण लोभ रहित तथा स्थिर बुद्धि है। उन्हें सांसारिक लोगों को विचलित करने वाली कामना, भय, लोभ या स्वार्थ आदि कोई भी विचलित नहीं कर सकता, अतएव श्री कृष्ण कदापि अन्याय का अनुसरण नहीं कर सकते। इस पृथ्वी पर समस्त मनुष्यों में श्री कृष्ण ही धर्म के ज्ञाता, परम धैर्यवान और परम बुद्धिमान् है।

2. पितामह भीष्म की सम्मति

ज्ञानवृद्धो द्विजातीनां क्षत्रियाणां बलाधिकः।
पूज्ये ताविह गोविन्दे-हेतू द्वावपि संस्थितौ॥
वेदवेदांगविज्ञानं बलं चाप्याधिकं तथा।
नृणा लोकेहि कोऽन्योऽस्ति विशेषः केशवादृते॥

(महा० समा० ३८ अ०)

अर्थात् धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ में अग्र पूजा के अवसर पर किसी सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति की पूजा की जानी थी। उस समय श्री कृष्ण का नाम प्रस्तुत करते हुए भीष्म जी कहते हैं-संसार में पूजा के दो ही मुख्य कारण होते हैं-ज्ञान और बल। श्री कृष्ण में ये दोनों गुण सर्वाधिक हैं, अतः श्री कृष्ण ही पूजा के योग्य हैं। इस समय संसार में कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं है कि ज्ञान तथा बल में श्री कृष्ण से अधिक हो।

3. महात्मा विदुर की सम्मति

अर्थेन तु महाबाहुं वार्ष्णेयं जिहीर्षसि।
न च वित्तेन शक्योऽसौ नोद्यमेन न गर्हया।
अन्यो धनंजयात् कर्त्तुमेतत् तत्त्वं ब्रवीमि ते॥

(महा० उद्योग० अ० ८८)

अर्थात् महात्मा विदुर धृतराष्ट्र को समझाते हुए कहते हैं हे धृतराष्ट्र ! पृथ्वी पर श्री कृष्ण सबके पूज्य हैं और वे जो कुछ

www.thearyasamaj.org

कह रहे हैं। वह हम सबके कल्याण की भावना से ही कह रहे हैं। और यह तुम्हारी बड़ी भूल है कि मैं श्री कृष्ण को बहुमूल्य उपहार देकर अपने पक्ष में कर लूंगा। श्री कृष्ण की अर्जुन के साथ जो दृढ़ मित्रता है, उसे आप धनादि के प्रलोभन से समाप्त नहीं कर सकते।

4. धर्मराज युधिष्ठिर की सम्मति

तव कृष्वण प्रसादेन नयेन च बलेन च।
बुद्धया च यदुशार्दूल था विक्रमणेन च॥
पुनः प्राप्तमिदं राज्यं पितृपैतामहं मया।
नमस्ते पुण्डरीकाक्ष पुनः पुनररिदम्॥

(म० शान्ति० ४३ प्र०)

अर्थात् महाभारत संग्राम की समाप्ति पर युधिष्ठिर श्री कृष्ण के प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट करते हुए कहते हैं-हे यादवों में श्रेष्ठ तथा शत्रुओं को जीतने में दक्ष श्री कृष्ण ! हमें यह पैतृक राज्य आपकी कृपा से प्राप्त हुआ है। आपकी शूरवीरता, अद्‌भुत युद्धनीति, लोकोत्तर बुद्धि कौशल तथा पराक्रम से ही हम इस संग्राम में विजयी हुए हैं, एतदर्थ आपका बार-बार धन्यवाद करते हैं।

5. दुर्योधन की दृष्टि में श्री कृष्ण

श्री कृष्ण दुर्योधन के विपक्ष में तथा हराने में मुख्य कर्णधार थे। पुनरपि श्रीकृष्ण के प्रति उसके हृदय में बड़ा सम्मान था। स्वयं दुर्योधन महात्मा विदुर के समझाने पर यह स्वीकार करता है-

स हि पूज्यतमो लोके, कृष्णः पृथुललोचनः।
त्रयाणामपि लोकानाँ विदितं मम सर्वथा।

(महा० उद्योग० ८९।५)

अर्थात् हे विदुर जी ! मैं यह भलीभांति जानता हूं कि श्री कृष्ण तीनों लोकों में सर्वाधिक पूज्य हैं।

6. कुरुराज धृतराष्ट्र की सम्मति

मोहाद् दुर्योधनः कृष्णं न वेत्तीह केशवम्।
सर्वोष्वपि च लोकेषु बीभत्सुरपराजितः।
प्राधान्येनैव भूयिष्ठममेयाः केशवे गुणाः॥

अर्थात् मेरा पुत्र दुर्योधन श्री कृष्ण की महिमा का मोहवश निरादर कर रहा है। श्री कृष्ण में इतने गुण हैं, उनको गिनाया नहीं जा सकता और इसलिये उन्हें कोई पराजित नहीं कर सकता है।

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट,
रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे,
मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व
थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

www.thearyasamaj.org

रजि. नं. पी.बी./जे.एल-/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

॥ ओ३म् ॥

आर्य समाज के नियम

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करने योग्य है।
3. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना, पढ़ाना और सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है। अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ।